www.singaporesangam.com

सिंगापुर से निकलने वाली पहली हिंदी पत्रिका

वर्ष-5
अंक 17

सिंगापुर संगम

ISSN: 25917773

सिंगापुर से प्रवासी लेखन

त्रैमासिक हिंदी पत्रिका

जनवरी-मार्च, २०२२ - वर्ष-५, अंक १७

सिंगापुर संगम

सिंगापुर से निकलने वाली पहली हिंदी पत्रिका **ISSN: 25917773**

- वर्ष ५
- अंक १७
- जनवरी - मार्च २०२२

सम्पादक:

डॉ संध्या सिंह

सहयोग:

आराधना झा श्रीवास्तव

अनमोल सिंह
युवराज आर्यन

आवरण चित्र:

अनामिका दत्ता

संपर्क:

Email: sangam.singapore@gmail.com

Facebook- https://www.facebook.com/singapore.sangam.3 ,

Page- sangam Singapore संगम सिंगापुर sinagpore sangam

Instagram: https://www.instagram.com/**singaporesangamhindi**/?hl=en

YouTube: https://tinyurl.com/**singaporesangamhindi**

Website: www.singaporesangam.com , **Magazine-** https://www.singaporesangam.com/magazines/

सिंगापुर

प्रकाशित रचनाओं के विचार लेखकों के अपने हैं| आवश्यक नहीं कि पत्रिका के संपादक या प्रबंधन सदस्य इससे सहमत हों।
सर्वाधिकार सुरक्षित
© Singaporesangam

सम्पादकीय

नूतन विक्रम संवत और कई त्यौहार जो इस माह की शोभा बढ़ाएँगे, सबकी आप सभी को अशेष शुभकामनाएँ।

समय अपनी गति से चलता है और अपने साथ हर किसी को गति देता है। देखते-देखते 'सिंगापुर संगम' पत्रिका अपने पाँचवें वर्ष में प्रवेश कर चुकी है। आप सभी के सहयोग के लिए हृदय से आभार। सिंगापुर के प्रवासी साहित्य को विश्व मंच और विश्व के विभिन्न मंचों को सिंगापुर से जोड़ने में सिंगापुर संगम पत्रिका एक कड़ी की तरह है। भले ही सिंगापुर का प्रवासी लेखन अभी अपने प्रारंभिक स्तर में है लेकिन अपनी उपस्थिति विश्व में बखूबी दर्ज करा रहा है इसी कारण पाँचवें वर्ष के प्रथम अंक को **सिंगापुर के प्रवासी लेखन** पर केन्द्रित किया गया है। अन्य व्यस्तताओं आदि के कारण सभी की रचनाएँ शामिल नहीं हो सकी हैं किंतु भरपूर प्रतिनिधित्व अवश्य समाहित है। सिंगापुर संगम अपने नाम के अनुरूप विश्व के हर भाग से संगम स्थापित करने का प्रयास करता है इसलिए सिंगापुर के रचना-संसार पर एक बड़ा भाग जोड़ने के साथ ही मॉरीशस देश की काव्यात्मक गाथा और भारत से रचनाओं की विविधता आपके पठन रुझान के लिए इस अंक में समाहित हैं।

इस अंक का आवरण चित्र सिंगापुर से प्रसिद्ध चित्रकार अनामिका दत्ता ने बनाया है। सिंगापुर संगम और सिंगापुर का प्रवासी लेखन दोनों अपने बीज रूप से प्रस्फुटित होकर पौधा बनने और आगे वृक्ष का रूप लेने की ओर बढ़ रहे हैं, इसी संकल्पना को अनामिका दत्ता ने अपनी तूलिका से जीवंत कर दिया है।

हम अपने सभी रचनाकारों के रचनात्मक सहयोग के लिए आभारी हैं। अगले अंक के लिए रचनाएँ, चित्र, पेंटिग आदि आमंत्रित हैं। आपकी प्रतिक्रियाएँ हमारे लिए बहुत ख़ास हैं अतः आपकी प्रतिक्रियाओं का इंतज़ार रहेगा!

धन्यवाद सहित

डॉ संध्या सिंह

आवरण चित्र

गति ही जीवन है

अनामिका दत्ता

विश्व में हिंदी—विशेषांक

इस अंक में

रपट	सिंगापुर ने मनाया प्रवासी भारतीय दिवस 2022	हेमा कृपलानी	5
रपट	विश्व हिंदी दिवस सिंगापुर 2022	प्रतिमा सिंह	9
काव्य-रस	पोस्टकार्ड - पत्रों की स्मृति !	शांति प्रकाश उपाध्याय	14
ग़ज़ल	अब ज़ियादा क्या करेंगे जान कर	अनिल कुलश्रेष्ठ	16
श्रद्धांजलि	भावभीनी श्रद्धांजलि–हम सबकी प्रिय सखी सरिता जी को	चित्रा गुप्ता	18
ग़ज़ल	आँख का पानी	आलोक मिश्रा	21
काव्य-रस	असफल संघर्ष	विनोद दूबे	23
ग़ज़ल	प्रभु का कण प्रभु को समर्पित कर दिया	डॉ अंकुर गुप्ता 'रुहसाफ़िर"	25
काव्य-रस	बसंत प्रेम में मन रंगा	रीता पाण्डेय	26
आलेख	गमले जितनी दुनिया, बोंसाई जैसे लोग	गौरव उपाध्याय	28
आलेख	समस्या – मेरे लिए वरदान	सुभाष चन्द्र	31
लघु कथा	*अख़बार पढ़ने का समय!*	रीना दयाल	33
काव्य-रस	फिर गढ़ेंगे प्रीत की किवदंतियाँ	डॉ प्रतिभा गर्ग	36
संस्मरण	जापान - एक विशेष पहचान	नंदकुमार देशपांडे	37
काव्य-गाथा	इंद्रधनुषों का देश मॉरीशस	कल्पना लालजी	44
हिंदी के वाहक	वो साँवरी सी लड़की	सुरभि डागर	53
कहानी	अठन्नी- एक प्रेम कथा	मनोज कुमार वर्मा	55
हिंदी के वाहक	सफरनामा	स्पंदन गर्ग	84
लघु कथा	भगीरथ	नीना सिन्हा	86
कहानी	स्नेह- लगाव	श्यामल बिहारी महतो	88

सिंगापुर ने मनाया प्रवासी भारतीय दिवस 2022

भारतीय उच्चायोग सिंगापुर और अंतरराष्ट्रीय सहयोग परिषद् के सहयोग से सिंगापुर संगम (सिंगापुर) और भारत दर्शन (न्यूज़ीलैंड) द्वारा प्रवासी दिवस के अवसर पर ऑनलाइन संगोष्ठी का आयोजन किया गया जिसके मुख्य अतिथि श्री नारायण कुमार- अंतरराष्ट्रीय सहयोग परिषद् के मानद निदेशक, विशिष्ट अतिथि हलचल हरियाणवी- हरियाणा के वरिष्ठ हास्य कवि, संगोष्ठी के संयोजक न्यूजीलैंड से रोहित कुमार 'हैप्पी', सिंगापुर से डॉ. संध्या सिंह व वक्ताओं में डॉ. पुष्पा भारद्वाज-वुड, रूपा सचदेव, डॉ. सुनीता शर्मा, इंद्रजीत (इन्दु) बाजवा और प्रीता व्यास न्यूजीलैंड से जुड़ी थीं। सिंगापुर से चित्रा गुप्ता, रीना दयाल, विनोद दूबे, प्रतिमा सिंह, परीक्षित शुक्ला ने भागीदारी की और कार्यक्रम का संचालन सिंगापुर से हेमा कृपलानी ने किया।

हेमा कृपलानी
हिंदी शिक्षिका
सिंगापुर

कार्यक्रम की शुरुआत करते हुए डॉ. संध्या सिंह ने सभी वक्ताओं का संक्षिप्त परिचय प्रस्तुत किया और संगोष्ठी के आयोजन का लक्ष्य स्पष्ट करते हुए कहा कि नये देश में बसना किसी के लिए सहज नहीं होता लेकिन कुछ समय रहने के पश्चात वही नया

देश अपना लगने लगता है। इस आने से बसने और अपना बनने की प्रक्रिया में बहुत सारी घटनाएँ घटती हैं। कुछ जो हम याद नहीं करना चाहते लेकिन कुछ जो हम भूल भी नहीं पाते। कभी-कभी पुरानी यादें स्वतः चेहरे पर हँसी ला देती हैं। सिंगापुर और न्यूज़ीलैंड से जुड़े वक्ताओं ने अपने प्रवास की बातों को गद्य या पद्य के माध्यम से प्रस्तुत कर एक बार फिर उन सुनहरी यादों को सबके साथ साझा किया।

अपने उद्बोधन में मुख्य अतिथि नारायण कुमार ने बताया कि प्रवासी दिवस मनाने की शुरुआत वर्ष 2003 में की गई थी और प्रथम आयोजन से वे इससे संबंधित रहे हैं। प्रवासी दिवस मनाने का उद्देश्य प्रवासी भारतीयों की भारत के प्रति सोच, भावना की अभिव्यक्ति, देशवासियों के साथ सकारात्मक बातचीत के लिये एक मंच उपलब्ध कराना है। उन्होंने यह भी बताया कि अंतरराष्ट्रीय सहयोग परिषद के भूतपूर्व महासचिव बालेश्वर अग्रवाल ने भारत सरकार से अनुरोध किया कि विश्व भर में चाहे वे एनआरआई हों, गिरमिटिया हों, पीआईओ हों, उनसे संबंध स्थापित करने के लिए और उनकी समस्याओं को जानने के

रपट- सिंगापुर से

लिए एक समिति गठित की जाए। माननीय अटल बिहारी वाजपेयी जब प्रधानमंत्री थे तो अपने कार्यकाल में उन्होंने एक समिति गठित की जिसे 'सिंघवी' कमिटी कहते हैं। इस कमिटी का उद्देश्य विदेशों में बसे भारतवंशियों से मिलने के लिए किया गया था क्योंकि तब यह देखा गया कि भारतवंशी लोग सिर्फ सांस्कृतिक रूप से नहीं, बल्कि आर्थिक रूप से, राजनीतिक रूप से सामाजिक रूप से विदेशों में अपनी बहुत महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहे हैं और अनेक देशों में भारतवंशी महत्वपूर्ण पदों पर आसीन हैं। नारायण जी ने यह भी बताया कि ९ जनवरी को ही महात्मा गांधी दक्षिण अफ्रीका से स्वदेश वापस आए थे इसलिए हर वर्ष प्रवासी भारतीय दिवस भी इसी दिन मनाया जाता है।

विशिष्ट अतिथि हलचल हरियाणवी ने अपनी हास्य कविता 'बिना हँसे ये ज़िन्दगी मानो की सजा है। बस हँसने, हँसाने में ही जीने का मज़ा है' द्वारा समा बाँध दिया और श्रोताओं ने खूब ठहाके लगाए। उनकी हास्य कविता ने फेसबुक व यूट्यूब से जुड़े श्रोताओं को भी गुदगुदाया।

संचालिका हेमा कृपलानी ने कार्यक्रम को आगे बढ़ाते हुए, अलग-अलग पृष्ठभूमि और विविध क्षेत्रों से जुड़े न्यूजीलैंड और सिंगापुर के प्रवासी वक्ताओं को अपने-अपने प्रवास के अनुभव सुनाने के लिए आमंत्रित किया। सभी वक्ताओं को सुनकर यह पता चलता है कि अपनी मातृभूमि से दूर जा बसे लोगों में से कुछ मनचाही तरक्की हासिल कर अपने सपनों को पूरा करने में सफल हो पाना और उसमें उनका साथ दिया कभी किसी अनजाने ने तो, कभी किसी अपने ने। उनके अपने जीवन के खट्टे-मीठे अनुभव, तरक्की की इस होड़ में व्यक्ति मात्र अपने मूल स्थान से दूर नहीं होता बल्कि कई बार उसके अपने विचारों, मान्यताओं, सभ्यता और संस्कृति आदि में भी काफी बदलाव आ जाते हैं। इसे बौद्धिक प्रवास भी कहा जा सकता है।

वक्ताओं ने गद्य या पद्य के माध्यम से कई चुटीले किस्से व कहानियाँ सुनाईं जिनमें न्यूजीलैंड की मुख्यतः 'ब्रिंग योर प्लेट' और सिंगापुर की 'वॉश योर ओन प्लेट' प्रथा के बारे में सुन श्रोताओं को बहुत मज़ा आया।

भारत दर्शन (न्यूज़ीलैंड) व संगोष्ठी के संयोजक रोहित कुमार 'हैप्पी' ने अपने प्रवास के पुराने दिनों को याद करते हुए एक कविता सुनाई जिसे सुन दर्शकों को न्यूजीलैंड के जीवन की छोटी-सी झलक मिली। उनकी कविता

"मक्की की रोटी ना सरसों का साग। मक्की की रोटी ना सरसों का साग, बस गए परदेस सभी, फूट गए भाग, मक्के की रोटी न सरसों का साग। गोरी की पायल की सुनती ना छम-छम, गोरी की पायल की सुनती न छम-छम भोर सबेरे। अरे भोर सबेरे ना करे कोई राग, भोर सबेरे ना, कोई मक्की की रोटी, न सरसों का साग।" सुनकर सभी भाव-विभोर हो गए।

डॉ. संध्या ने संगोष्ठी का समापन करते हुए अपना एक छोटा-सा किस्सा सुनाया कि वे जब बनारस से सिंगापुर आईं तो कैसे ऊँची-ऊँची इमारतों के बीच वे उलझीं और सुलझीं।

सभी वक्तागणों ने अपनी कई निजी बातें कहीं। कई ऐसी बातें जो शायद उन्होंने इससे पहले कभी नहीं बताई हो। इसी के साथ संध्या जी ने धन्यवाद दिया और कहा कि हमें सब के जीवन के संस्मरण सुनने का सुनहरा अवसर मिला और आज का दिन प्रवासी भारतीय दिवस के इतिहास में हमेशा याद रहेगा।

****

विश्व हिंदी दिवस सिंगापुर 2022

10 जनवरी 2022 का विश्व हिंदी दिवस सिंगापुर में बेहद खास रहा। वैसे तो यहाँ संगोष्ठियाँ होती ही रहती हैं परंतु इस वर्ष पहली बार यहाँ हिंदी की ***अंतराष्ट्रीय संगोष्ठी*** का आयोजन हुआ। भारतीय उच्चायोग सिंगापुर के तत्वावधान में सिंगापुर संगम संस्था की डॉ संध्या सिंह जी ने कई देशों की यूनिवर्सिटी के हिंदी विभाग और प्रोफेसरों को आभासीय मंच पर जोड़कर ***"हिंदी का वर्तमान स्वरूप एवम संभावनाएं"*** विषय पर अंतरराष्ट्रीय हिंदी संगोष्ठी का आयोजन किया। सिंगापुर संगम के साथियों के प्रयास से संस्कृति के विभिन्न पक्षों को भी देखने और सुनने का मौक़ा मिला।

प्रतिमा सिंह
हिंदी शिक्षिका व कवयित्री
सिंगापुर

कार्यक्रम के मुख्य अतिथि भारतीय उच्चायोग सिंगापुर के चांसरी प्रमुख शिवजी सिंह जी की ओर से दीप प्रज्जवलित करके डॉ संध्या सिंह जी ने कार्यक्रम की शुरुआत की। विशिष्ट अतिथि वक्ता ऑस्ट्रेलियन नेशनल यूनिवर्सिटी से प्रो. पीटर फ्रिडलैंडर, उपसाला यूनिवर्सिटी, स्वीडन से

रपट- सिंगापुर से

प्रो. हाइंस वर्नर वेसलर, हार्वर्ड यूनिवर्सिटी से डॉ रिचर्ड डिलेसी, ताशकंद स्टेट यूनिवर्सिटी ऑफ ओरिएंटल स्टडीज से प्रो. उल्फत मुहिबोबा और यूनिवर्सिटी ऑफ फिजी से मनीषा रामरक्खा ने विषय पर विचार विमर्श किया एवम अपना संबोधन दिया।

सिंगापुर की माध्यमिक २ की एक छात्रा वल्लिमई कडप्पन ने पूरे पारंपरिक वेशभूषा में अपने उत्कृष्ट भरतनाट्यम नृत्य द्वारा कार्यक्रम का आगाज़ किया।

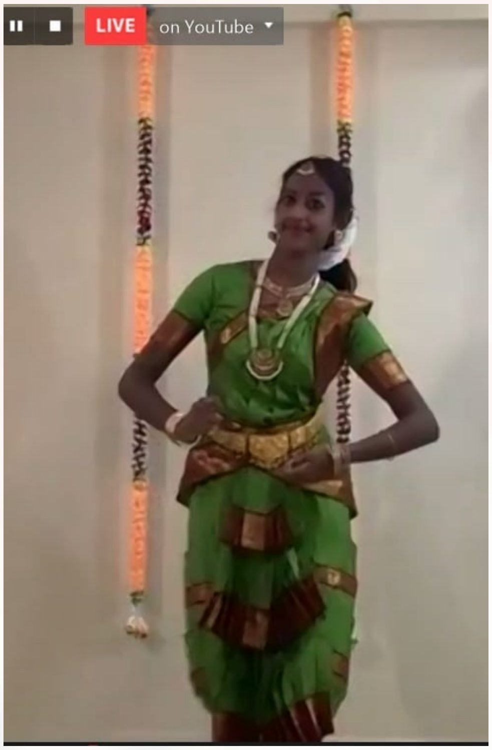

संगोष्ठी के गंभीर विषय को संतुलित करने के लिए कार्यक्रम में सिंगापुर के विभिन्न पाठशालाओं से विद्यार्थियों ने कई सांस्कृतिक कार्यक्रम भी प्रस्तुत किए। नन्ही सी रिया नेमा ने अत्यंत मधुर भजन "यशोमति मैया से बोले नंदलाला" गाया। जिया राय और अनाया राय ने पिंक

रपट- सिंगापुर से

फिल्म के काव्य गीत पर सुंदर मनमाेहक नृत्य किया। सिंगापुर से रीना दयाल, प्रसून सिंह, प्रतिमा सिंह, बीना मिश्रा ने सांस्कृतिक कार्यक्रमों का संयोजन किया जिससे कार्यक्रम में रोचकता और बढ़ गई।

संगोष्ठी के प्रारंभ में मुख्य अतिथि शिवजी सिंह जी ने सबसे पहले प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी द्वारा विश्व हिंदी दिवस पर दिए गए संदेश को पढ़कर श्रोताओं में नई चेतना एवम नई

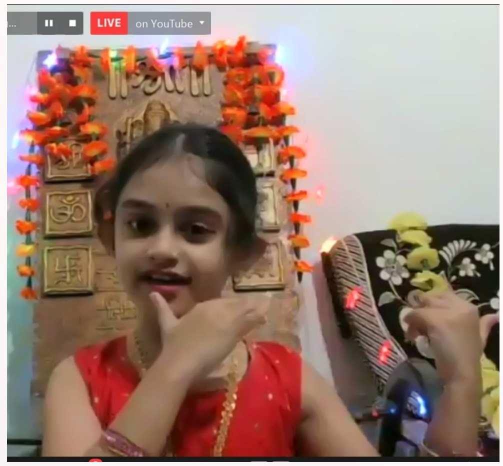

ऊर्जा का संचार किया। इसके बाद उन्होंने हिंदी भाषियों की बढ़ती संख्या और विश्व में हिंदी के वैश्विक रूप से सभी को परिचित कराया। 'हिंदी का वर्तमान स्वरूप और संभावनाएं' विषय पर कई पहलुओं पर बातें की।

पहले वक्ता के रूप में ऑस्ट्रेलियन नेशनल यूनिवर्सिटी से प्रो. पीटर फ्रिडलैंडर जी ने अपने विचार प्रस्तुत किए। साउथ एशियन स्टडीज सेमिनार, ब्रज कैंप, आंचलिक भक्ति सम्मेलन आदि से प्राप्त अपने भक्ति साहित्य के विशेष अनुभवों को उन्होंने सभी से साझा किया। उन्होंने बताया कि ब्रज भाषा में लिखी कविताओं के असली रस का अनुभव भाषा ज्ञान से ही किया जा सकता है। तमिल नाडु, महाराष्ट्र, बंगाल, एवम उत्तर भारत में भक्ति के उदभव एवम उसके विभिन्न रूप पर भी चर्चा की।

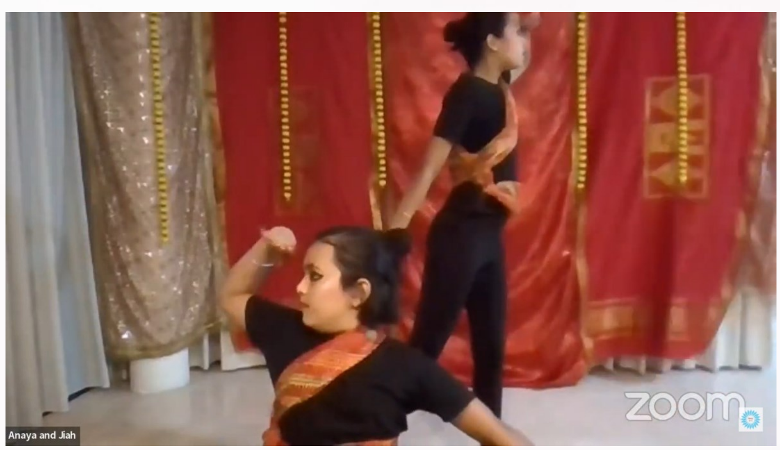

उपसाला यूनिवर्सिटी, स्वीडन से प्रो. हाइंस वर्नर वेसलर जी ने विश्व में हिंदी की दिशा एवम दशा पर विचार विमर्श किया। उन्होंने एक संस्कृत श्लोक से अपने वक्तव्य का श्रीगणेश किया। उन्होंने बताया कि हम आधुनिक भाषा एवम साहित्य को आजकल की राजनीति से अलग नहीं कर सकते। स्वीडन में हिंदी भाषा को समृद्ध बनाने के लिए उनके एवम अन्य लोगों द्वारा क्या क्या कार्य किए जा रहे हैं- इस विषय पर उन्होंने प्रकाश डाला। हिंदी भाषा और रोजगार की संभावनाओं पर भी चर्चा की।

हार्वर्ड यूनिवर्सिटी से डॉ रिचर्ड डिलेसी जी ने बड़े ही रोचक पावर प्वाइंट स्लाइड्स के माध्यम से हिंदी साहित्य की दिशा, स्वरूप, हालात और भविष्य पर गहन चर्चा की। विश्वविद्यालय स्तर पर हिंदी की स्थिति पर प्रकाश डाला। अमेरिका में हिंदी भाषा के स्वरूप पर महत्वपूर्ण जानकारियाँ प्रदान की। उन्होंने कुछ वृद्ध और पुराने, कुछ स्वर्गीय, और कुछ नवीन साहित्यकारों के नाम ले कर एक बड़ा ही गंभीर प्रश्न खड़ा किया कि अभी भी साहित्यकारों की सूची में अधिकांश नाम स्वर्गीय एवम वृद्ध साहित्यकारों के हैं तो क्या हमारा हिंदी साहित्य सही दिशा में जा रहा है? युवा लेखकों एवम युवा साहित्यकारों की हिंदी भाषा को बहुत अधिक ज़रूरत है।

ताशकंद स्टेट यूनिवर्सिटी ऑफ ओरिएंटल स्टडीज से प्रो. उल्फत मुहिबोबा जी अपने वक्तव्य में कहा कि उज़्बेकिस्तान में लोगों द्वारा हिंदी सीखने का एक सबसे बड़ा कारण है - बॉलीवुड फ़िल्में, भारतीय गीत - संगीत एवम भारतीय कला। आत्मा की शांति के लिए भक्ति साहित्य की आवश्यकता है। उन्होंने बताया कि वे भक्ति साहित्य को समझने के लिए भारत में जा कर रहीं। उन्होंने अपनी पाठशाला के पाठ्यक्रम की पुस्तकों के लेखन एवम प्रकाशन के विस्तृत कार्य को भी सबसे साझा किया।

यूनिवर्सिटी ऑफ फिजी से मनीषा रामरक्खा जी ने हिंदी की वास्तविकता के तथ्यों पर प्रकाश डालते हुए फीजी में हिंदी की स्थिति पर अपने विचार प्रकट किए। चूँकि वे फिजी के शिक्षा मंत्रालय से जुड़ी हैं, उन्होंने वहाँ की शिक्षा प्रणाली के विषय में भी विस्तृत रूप से बताया। उन्होंने इस बात पर विशेष बल दिया

रपट- सिंगापुर से

कि मातृभाषा संस्कृति की वाहक है। मातृभाषा मानव जीवन की चाहत नहीं बल्कि ऐसी आवश्यकता है जो मानव को पूर्णता प्रदान करती है। उन्होंने अपनी कविता "बदलते युग की है ये पुकार - चलो हिंदी भाषा की ओर!" सुनाकर अपनी वाणी को विराम दिया।

सभी वक्ताओं के वक्तव्ययों के पश्चात डॉ संध्या सिंह जी ने प्रोफेसर वी जगन्नाथन जी को विशेष टिप्पणी के लिए आमंत्रित किया। उन्होंने हिंदी भाषा में तेजी से प्रवेश करती हुई अशुद्धियों एवम विकारों पर चिंता व्यक्त की। उन्होंने कहा कि एक ऐसी व्यवस्था बनाई जानी चाहिए जहाँ हिंदी के सभी संसाधनों को समग्र रूप से एकत्र कर के सही सामग्री उपलब्ध कराई जा सके। इस संगोठी में साहित्य, भाषा, संवाद, संस्कृति, हिंदी के हर पहलू पर चर्चा हुई।

कार्यक्रम का संचालन छात्र प्रार्थक शर्मा और सिंगापुर संगम की सदस्या प्रतिमा सिंह ने किया। अंत में धन्यवाद ज्ञापन सिंगापुर संगम संस्था की अध्यक्ष डॉ संध्या सिंह जी ने दिया।

****

पोस्टकार्ड - पत्रों की स्मृति !

मेरे घर का पुराना बक्सा,
नवोदय के पत्रों से भरा है,
मैंने जो भी लिखा था,
विविध रंगो से सजा है !

पंद्रह पैसे के पोस्टकार्ड पर,
पंद्रह करोड़ की बात,
कुशलता की कामना से ले कर,
यादों की अनगिनत बात,

पंद्रह पैसे का वो कार्ड,
हज़ारों कहानियाँ बताता था,
कभी अपनो को तो,
कभी दूसरों को भी रुलाता था ।

मैं कुशल से हूँ, चिट्ठी की यही बात,
सबको एक साथ राहत देती थी,
याद की बात करने पर,
आँसुओं की बरसात,
एकसाथ होती थी ।

"आई लव यू" कभी नहीं लिखा,
उनके कुशलता की कामना ही,
प्यार की सच्चाई थी,
पढ़ने की लालसा ही,
बंधन की शहनाई थी ।

पंद्रह पैसे का पोस्ट कार्ड,
पंद्रह दिन में मिलता था,
वहटसप्प की तरह नही,

शांति प्रकाश उपाध्याय
सीनियर प्रोजेक्ट मैनेजर,
गवर्नमेंट टेक्नोलॉजी एजन्सी
व लेखक और कवि

नवोदय से लिखा वह पत्र,
पूरे परिवार को,
एकसाथ मिलता था ।

अपने अंकों की गाथा,
क्रिकेट के स्कोर की बड़ाई,

काव्य-रस– सिंगापुर से

अगली परीक्षा का दिनांक,
लिखता था सब कुछ,
जवाब भी आता था,
जब हॉस्टल से घर जाता था,
सारे पत्र एक एक कर,
मोतियों सा सजा पाता था !

अपनो को लिखना,
सब को समझना,
दिल की बात उड़ेलना,
गागर में सागर भरना,
पत्र सब कुछ सिखाता था,
पत्र ऐसी चीज़ थी जनाब,
जीवन का हर रंग बताता था ।

पता है आप को,
वह ट्विटर के ट्वीट की तरह,
दिन में सौ बार पढ़ा जाता था,
पन्द्रह दिन बाद मिलता था,
पर वहटसप्प से ज़्यादा,
अप्डेटेड माना जाता था !

पंद्रह पैसे का पोस्टकार्ड,
मार्क जुकरबर्ग से बड़ा विधाता था,
ऑटो पॉपअप की तरह रोज़,
डाकिया घर घंटी बजाता था !

फ़ेसबुक नहीं था,
पोस्टकार्ड और अंतरदेशी था,
फिर भी पत्र लिखने वाले का,
चेहरा साफ नज़र आता था !

कभी कभी पुरानी बातों को,
उधेड़ना अच्छा लगता है,
अपने प्रेम पत्रों को पढ़ना,
तनहाइयों से अलग करता है !

पहला पत्र आपने भी,
कभी लिखा होगा,
शायद किसी की याद में,
जब दूरियाँ लम्बी होंगी,
तो लिखा होगा !

दूरियाँ कभी झिझक की,
तो कभी अहम की होती हैं,
पत्र अपने आप में,
कम बोलने वालों के लिए,
एक दुआ होती है !

नवोदय का पहला पत्र,
पुरानी बरसाती में लिपटा,
उन्नीस सौ सत्तासी से,
किसी संदूक में ज़मा है ।

किसी के दिल पर,
और किसी के स्मृति पटल पर,
वह आज भी छपा है !

हो सके तो अपने बच्चों से,
चिट्ठी लिखवाना शुरू करूँगा,
बूढ़े होने पर,
तनहाइयों को दूर करने के लिए,
उनकी लिखावट पढ़ा करूँगा !

****

अब ज़ियादा क्या करेंगे जान कर

लक्ष्य का पहले सही अनुमान कर
और उसके बाद फिर प्रस्थान कर

दूसरों को भी जगाना था जिन्हें
सो रहे हैं वो ही चादर तान कर

सूक्ष्म या स्थूल या कारण शरीर
सब ज़रूरी हैं, उचित सम्मान कर

छोड़ भ्रम स्वामित्व के अधिकार का
अपने घर में ख़ुद को ही मेहमान कर

ज्ञान की नदियों में आया है उफ़ान
इनका पानी पीजिये, पर छान कर

इस ग़ज़ल में कह दिया काफ़ी 'अनिल'
अब ज़ियादा क्या करेंगे जान कर

****

अनिल कुलश्रेष्ठ
साहित्यकार
सिंगापुर

ग़ज़ल-सिंगापुर से

यूँ न हो के खा ही जाएँ चीटियाँ
मीठी फ़ित्रत* को भी कुछ खारी रखो

कूच* की हर वक़्त तैयारी रखो
काम अपने फिर भी सब जारी रखो

बीते कल से आज को आज़ाद कर
हर सुबह फिर से नई पारी रखो

मत रहो लाचार दुनिया में कभी
जब हो सिज़्दे में तो लाचारी रखो

बस ख़ुदा से वास्ता बाक़ी रहे
बाद उसके ख़ुद तलक यारी रखो

इश्क़ में अच्छा नहीं कहते इसे
बस ज़रूरत भर को ख़ुद्दारी रखो

यूँ न हो के खा ही जायें चीटियाँ
मीठी फ़ित्रत* को भी कुछ खारी रखो

नाख़ुदा* को सौंप दो गठरी 'अनिल'
बोझ अपने सर पे क्यों भारी रखो

****

(कूच = प्रस्थान, फ़ित्रत = स्वभाव , नाख़ुदा = नाविक)

भावभीनी श्रद्धांजलि–हम सबकी प्रिय सखी सरिता जी को

"सरिता जी आप तो गजब ढा रही हैं "2019 दिसम्बर में दिल्ली में अपनी प्रिय सखी सरिता जी से एक विवाह में मिलने पर मैंने कहा। जरी की साड़ी, हेयर ड्रेसर से सेट कराये केश और एलीगेंट मेकअप। बहुत मनमोहक लग रही थीं। सुनकर बहुत प्रसन्न हुईं। दिल्ली में 'कॉमन' दोस्त की बिटिया के विवाह में मिली थीं। "चित्रा मेरी कमर में बहुत दर्द है पेन किलर खा-खाकर काम चला रही हूँ।" सरिता जी ने कहा। शादी की भागदौड़ हो रही है ,सिंगापुर पहुँच कर सब ठीक हो जाएगा। मैंने इस दर्द को साधारण मानकर कहा। " सिंगापुर से मुझे ऑस्ट्रेलिया जाना है पूनम के बेटे (धेवते) की ग्रेजुएशन सेरेमनी है। मैंने बधाई दी। कुछ दिनों बाद मैंने हालचाल जानने के लिए सरिता जी को फोन किया। मेरी प्रिय सखी अस्पताल में थीं। स्वर में निराशा थी उन्हें कैंसर हो गया है, यह ख़बर मुझे उनसे ही मिली। अवाक् रह गई सुनकर। मेरे पास सांत्वना के शब्द ही नहीं

चित्रा गुप्ता
मार्गदर्शिका-ग्लोबल हिन्दी फाउंडेशन
व लेखिका और कवयित्री
सिंगापुर

श्रद्धांजलि- सिंगापुर से

थे। चुपचाप फोन रख दिया। पैर कांपने लगे। ऑस्ट्रेलिया से वापिस आने पर टेस्ट करने पर पता चला कि उन्हें कैंसर ने घेर लिया था। मैं बेहद बेचैन रही। रात तक किसी काम में मन नहीं लगा। चिकित्सा विज्ञान बहुत उन्नति कर चुका है, इलाज हो जाएगा ठीक हो जायेंगी। मन को आश्वस्त किया और मन कुछ सीमा तक आश्वस्त भी हो गया।

इलाज चल रहा था। औषधियों के दुष्प्रभाव (side effect) से वे बहुत परेशान थीं। पर कोई अन्य उपाय भी नहीं था। हम सब बहुत आशान्वित थे। मार्च 2020 से सितम्बर 2021 में मैं और अन्य सखियाँ उनसे चार या पाँच बार मिले। उन्होंने बाल डाई करने छोड़ दिए थे। "मुझे सफेद बालों में आप बहुत सुंदर दिखती हैं ।" मैंने उनसे कहा। हल्की सी मुस्कराहट उनके चेहरे पर आई। दोस्तों के बीच दर्द भी कुछ समय के लिए पीछा छोड़ कर चला जाता है। सरिता जी की मुस्कराहट और नन्ही सी हँसी ने इस सच्चाई का अनुभव कराया । उनकी भूख कम हो चुकी थी फिर भी मनुहार करने पर हमारे साथ थोड़ा सा खा लेतीं। फोन पर कभी- कभी बहुत दुर्बल स्वर में संक्षिप्त बातचीत हो जाती।

अक्टूबर 2021 से बातचीत का सिलसिला लगभग बंद हो गया। उन्होंने फोन उठाना और संदेश देखना भी बंद कर दिया। हम सब सखियाँ उनके लिए चिंतित रहते थे। उनके स्वास्थ्य लाभ के लिए परम पिता से प्रार्थना करते। आभास हम सबको हो रहा था पर हम सब खामोश थे। जीवन हाथों से इसी तरह फिसल जाता है , हम सब जानते हैं फिर भी मानने का मन नहीं होता। 27 फरवरी 2022 को हम सबकी प्रिय सखी की

जीजिविषा समाप्त हो गई थी उनका निधन हो गया। शरीर पंच तत्व में विलीन हो गया । समाचार मिलने पर हम सबकी आँखें नम हो

गईं।

कहते हैं बड़ी उम्र में मित्रता नहीं हो पाती। मेरी और सरिता जी की मित्रता तो बचपन में नहीं हुई थी। हम तो बड़े होकर ही सिंगापुर में मिली थीं। हिन्दी सोसायटी सिंगापुर में हमने एक साथ अध्यापन कार्य किया था। वहीं से मित्रता के बीज पनपे थे। उनके साथ काम करने में आनन्द आता था। जिंदादिल व्यक्तित्व की धनी और सकारात्मक ऊर्जा से ओतप्रोत थीं वे। रिटायर जीवन का आनन्द लेना चाहती थीं। उन्हें सखियों के साथ क्रूस पर जाना था, सबके साथ लंच - डिनर पर जाना था। यूँ हम सबने आपस में बहुत यादगार समय बिताया फिर भी कुछ ख्वाहिशें अधूरी रह जाती हैं। हमारे भजन ग्रुप की सदस्या थीं सरिता जी। उनका स्वर मधुर था वे हमेशा दुर्गा माँ का भजन गाती थीं। यौवनावस्था में पति का संग छूट गया था। माता - पिता बन सन्तान की परवरिश की। वे दूसरों की पीड़ा का अनुभव करती थीं। "जिसके पाँव में छाला होगा पर दर्द को उसने ही जाना होगा।" यह पंक्ति उन पर खरी उतरती है । हम सब भाग्यशाली हैं उन सरीखी सखी पाकर। आप हमारी स्मृतियों में सदैव सजीव रहेंगी। आप जहाँ भी जन्म लेंगी यकीनन वहाँ पर महफिल सजा लेंगी। शत - शत नमन सरिता जी।

****

आँख का पानी

बात कहने को अभी बाकी है क्या
चुक गयी मय तिश्नगी बाकी है क्या ?

आईने में अक्स से यह पूछना
ज़िन्दगी में ज़िन्दगी बाकी है क्या ?

बस मुखौटे ही दिखे इस भीड़ में
आदमी में आदमी बाकी है क्या ?

शर्म क्या है आँख का पानी ही तो
आँख का पानी अभी बाकी है क्या ?

बाहरी चकमक के इस माहौल में
अंदरूनी सादगी बाकी है क्या ?

बिक रहीं बे-मौसमी फल, सब्ज़ियाँ
मौसमों की ताज़गी बाकी है क्या ?

आलोक मिश्रा
टेक्निकल मैनेजर व
लेखक और कवि
सिंगापुर

हीर-रांझा की गज़ब थी आशिकी
वो रूहानी आशिकी बाकी है क्या ?

दीप ने जलकर उजाला तो किया
बुझ गया तब रौशनी बाकी है क्या ?

****

नया सुरूर

ख़याल मन को भाएगा लिखेंगे तब ग़ज़ल नई
नया सुरूर छाएगा लिखेंगे तब ग़ज़ल नई ।

सभी को रोटियाँ मिलेंगी और हर बशर यहाँ
जो पेट भर के खाएगा लिखेंगे तब ग़ज़ल नई ।

जिसे भी देखिए लगा रहा है घाव इक नया
दवा कोई लगाएगा लिखेंगे तब ग़ज़ल नई ।

प्रजा के दर्द बाँटने महीप जब महल से दूर
प्रजा के पास आएगा लिखेंगे तब ग़ज़ल नई ।

सहूलियत किसान को मिलें फ़सल के वास्ते
किसान मुस्कराएगा लिखेंगे तब ग़ज़ल नई ।

मिटा के नफरतों को गीत गुनगुनाएँ प्यार के
जहान खिलखिलाएगा लिखेंगे तब ग़ज़ल नई ।

पढ़ा-लिखा युवक भटक रहा है काम के लिए
वो रोजगार पाएगा लिखेंगे तब ग़ज़ल नई ।

उसी पुरानी बात को मैं बार-बार क्या कहूँ
जो दिल को रास आएगा लिखेंगे तब ग़ज़ल नई ।

****

असफल संघर्ष

मिलकर संघर्ष के तमाम छोटे-बड़े हिस्से,
बमुश्किल बना पाते हैं सफलता के एकाध किस्से,
तो माना कि सफ़लता का गुण गान होना चाहिए,
पर असफल संघर्ष का भी तो जरा सा सम्मान होना चाहिए,

प्रसव के बाद लाखों महिलाएँ,
बढ़ी ज़िम्मेदारी का आभास करती हैं,
शरीर और मन को फिर से पटरी पर ,
लाने के लिए घंटों प्रयास करती हैं,

जबकि वो जानती हैं कि ज़रूरी तो नहीं ,
हर मेहनत का मुकम्मल अंजाम हो जाए ,
प्रसव के बाद हर लड़की मैरीकॉम हो पाए ,

गाँव देहात से निकले कई लड़के,
खाली जेबों में ढेरों ज़्यादा ख्वाब लाते हैं,
सीने में कुछ हासिल करने की चाह ,
और बाजुओं में मेहनत बेहिसाब लाते हैं,

जबकि वो जानते हैं कि ज़रूरी तो नहीं ,
हर संघर्ष पर एक दिन कहानी बन पाए ,

विनोद दूबे
कैप्टन-मर्चेंट नेवी
व लेखक और कवि
सिंगापुर

हर लड़का धीरूभाई अम्बानी बन जाए ,

कभी आस-पास नज़रें घुमाकर देखिये तो सही,
सुबह की नौकरी से थके लौटे पिता,
शाम की शिफ्ट के लिए तैयार हो रहे हैं ,
पूरा परिवार के पेट भर सपनों की खातिर,
माँ के अपने सपने रसोई में बेज़ार हो रहे हैं,
पड़ोस की छत पर देर रात ,
कोई टेबल लैंप जलाये पढ़ रहा होगा,
स्टार्ट अप की चाह में ऑफिस के बाद,
कोई लैपटॉप पर घंटों खिटपिट कर रहा होगा,

जबकि ये सब जानते हैं , ज़रूरी तो नहीं ,
हर पसीने का नमक , सफलता के स्वाद में बदल जाये,
हर खामोश संघर्ष, एक दिन विजय नाद में बदल जाये,

इन संघर्ष के किस्सों पर कल फ़िल्म बने ना बने,
इनकी पीठ पर आज शाबाशी की निशानी दीजिये,
ये नवांकुर कल को वृक्ष बनें या मुरझा जाएँ,
पर आज इन्हे पनपने को थोड़ा सा पानी दीजिये।

****

प्रभु का कण प्रभु को समर्पित कर दिया

मेरे चिंतन मेरे मनन का मंत्र है वो
मेरे भजन मेरे सृजन का यंत्र है वो
वो कलपना में मेरी है मेरा ही रूप
यथार्थ के धरातल में स्वतंत्र है वो

हो स्वयं से स्वर उदय वो गीत रहूँगी
प्रेम प्रण नहीं भावना से मीत रहूँगी
स्वतंत्र रहूँगी केवल निर्वाण तक मैं
हाँ गोलोक में कान्हा की प्रीत रहूँगी

बंधन देह का तो क्षणिक है नश्वर है
मन से सम्बंध अमरता का अवसर है
अब भूलोक हो स्वर्ग या वैकुंठ चाहे
दो आत्माओं के मिलन का परिसर है

कामना को चेतना में परिवर्तित कर दिया
प्रियतमा तुमने प्रेम को गर्वित कर दिया

डॉ अंकुर गुप्ता 'रुहसाफ़िर"
चिकित्सक, कवि
सिंगापुर

दोनों केवल अणु हैं एक ही प्रभु के कण
प्रभु का कण प्रभु को समर्पित कर दिया

*****

बसंत प्रेम में मन रंगा

ऋतुराज के आगमन पर,
प्रकृति है इठला रही ।
नए रूप - रंग से सजकर,
चराचर जगत को
आकर्षित कर रही ।

वसुंधरा स्व यौवन पर,
रह - रहकर इतरा रही ।
प्रकृति के लावण्य को
नव किसलयों से महका रही ।

अमराइयों में बैठी कोयल,
मधुर कूक सुना रही ।
भौंरों की गुंजन हृदय में,
हूक सी है उठा रही ।

शीतल, मंद, सुवासित वायु

रीता पाण्डेय
लेखिका और कवयित्री
सिंगापुर

काव्य-रस– सिंगापुर से

बटोहियों को सुख पहुँचा रही।

प्रकृति अपने वैभव पर,

फूली नहीं समा रही ।

सरसों के पीले फूलों की

ओढ़ ओढ़नी,

बसंत नृत्य कर रहा ।

अद्भुत सौंदर्य की छटा,

चारों ओर बिखेर रहा ।

उपवनों की अवर्णनीय शोभा से,

वसुधा सुगंधित हो रही ।

पल्लवों के बीच से

छनकर किरणें मन को मोह रहीं ।

सुगंधित पुष्प,मन में,

अनोखी चेतना जगा रहे ।

अपूर्व लीला प्रकृति की ,

मन को मादक बना रही ।

बसंत के मादक राग से ,

भाव सरिता उमड़ पड़ी ।

कामदेव के पुत्र ने,

सृष्टि को सुंदर सौगात दी ।

****

गमले जितनी दुनिया, बोंसाई जैसे लोग

गौरव उपाध्याय
सीनियर टेक्नॉलजी सेल्स प्रोफेशनल ,
लेखक और कवि
सिंगापुर

मुझे लगता है कि पिछले एक से दो दशक में दुनिया का विस्तार नहीं हुआ, दुनिया सिमटती गई है। कला मंच से सिमट कर टेलिविज़न, टेलिविज़न से सिमट कर कम्प्यूटर और कम्प्यूटर से सिमट कर मोबाइल फ़ोन में रह गई, परिवार "पाटीदारी" से सिमट कर " न्यूक्लीर" हो गये और बात रखने की विधाएँ उपन्यासों, नाटकों से सिमट कर यूट्यूब शॉर्ट्स और इंस्टाग्राम रील्स में रह गए हैं/ सब कुछ ६० सेकंड के विडीयो और ६ इंच की स्क्रीन में सिमट रहा है – प्रकृति के बिल्कुल विपीरित, प्रकृति जो असीमित है, प्रकृति जो विस्तार का प्रतीक है। मैं पिछले १ साल में २०० लोगों से ज़्यादा से व्यक्तिगत तौर पर बात कर चुका हूँ – जो लोग कथित तौर पर मानसिक अवसाद से गुजर रहे हैं, कथित इसलिए क्योंकि ज़्यादातर मामलों में यह अवसाद चिकित्सीय रूप से निर्धारित नहीं है बल्कि स्वयं स्वीकृत है। और इन सबका कारण और परिणाम है – सिमटते हुए

आलेख- सिंगापुर से

लोग, दुनिया में दिखना बरगद की तरह लेकिन जीना बोंसाई की तरह। पिछले दशक में सामजिक दायरे कम हुए हैं, व्यक्तिगत स्वतंत्रता बढ़ी है लेकिन लोगों ने स्वयं को दायरों में कसना शुरू कर दिया है।

आप चाहे वर्गाकार हों, लेकिन एक गोल छेद में एकदम फ़िट होकर बैठने की कोशिश कर रहे हैं, हर चीज़ के मायने द्विआधारी या बाइनेरी हो गए हैं या तो शून्य या फिर एक, या तो सब बढ़िया या सब ख़राब, बस निर्णय जल्दी होना चाहिए। मुझे यह भी लगता है कि लोग आत्म विश्वास और स्वयं की पहचान की परिभाषाओं को भी तोड़-मरोड़ कर अपने आप को एक ग़लत वृतान्त सुना रहे हैं - अपने आप में रहना सामर्थ्य बनता जा रहा है, रिश्तों को छोड़ना और पकड़ना इतना सहज होता जा रहा है जैसे स्लेट पर लिखना मिटाना। ख़ासकर युवाओं में संयम की इतनी कमी है कि किसी चीज़ को समझने से पहले, उसमें महारथ हासिल करनी है - अनुभवी कहलाना है लेकिन अनुभव नहीं करना। हमारे चारों ओर इतना सारा 'इन्फ़र्मेशन' और 'कांटेंट' है कि आप जैसा सोच रहे हैं जिस विषय पर उसे कई गुना उस दिशा में ले जाने का काम गूगल बाबा कर देते हैं - हर झगड़ा तलाक़ बन रहा है, हर छोटी असफलता आत्महत्या बन रही है, हर फोड़ा कैन्सर बन जा रहा है - हर बरगद रूपी इंसान बोंसाई बन रहा है, ज्ञान बहुत है ज्ञानी कोई नहीं। यह घातक है, प्राकृतिक तौर पर मनुष्य का शरीर और मस्तिष्क इतनी तेज प्रशंसकरण के लिए बने ही नहीं हैं, जैसे कोई चौबीस घंटे आपको एक फ़ास्ट फ़ॉर्वर्ड की हुई मूवी में जीने को कह रहा है।

मैं अत्यंत आशावादी हूँ और तकनीकी विकास का बहुत बड़ा समर्थक लेकिन मुझे लगता है कि जीने की कला सीखना, व्यवहार में लाना अनिवार्य है, इस क्षणिकता को विराम चाहिए, विस्तार और असीमितता को जीवन में फिर से लाना अनिवार्य है।

ज़रा सा जीवन में रुकना, मुड़ कर पीछे देखना कि कहाँ से चले हैं, आगे सुदूर देखना कि जीवन कितना विस्तृत है, कितनी सारी सम्भावनाएँ हैं, निर्णय लेने के लिए कितने सारे पहलुओं को देखना है। मैंने अक़्सर लोगों को कहा है कि रौशनी में जीने की चाह है तो अंधेरे को आत्मसात् करना होगा, सूर्य की तपिश चाहिए तो सुबह उठकर सूर्योदय की प्रक्रिया देखनी होगी, दुखों और अवसादों से छुटकारा चाहिए तो जीवन का विस्तार और समय की असीमितता देखनी होगी, जीवन में कुछ बड़ा करना है तो अपने मन के दायरों को तोड़ना होगा, प्रकृति को उस रफ़्तार से छूना होगा जिस रफ़्तार से प्रकृति सहज होकर चलती है – निर्णय आपका है कि आप हरी घास पर चलते हुए तुषार कणों को अपने तलवों में महसूस करना चाहते हैं या फिर अपने मोबाइल फ़ोन पर स्क्रोल करके मॉर्निंग वाला एक वॉल पेपर डाउनलोड करना चाहते हैं बस।

****

समस्या – मेरे लिए वरदान

समस्या – यह शब्द प्रायः नकारात्मक समझा जाता है और यह शब्द मानस-पटल पर पूर्व में घटित परेशानी की झलक दिखा जाती है। कई बार तो इसके बारे में सोचते ही हाथ-पैर फूलने लगते हैं और सोचते सोचते ही हम पसीने से सराबोर हो जाते हैं।

सुभाष चन्द्र
निदेशक, बहुदेशीय संस्थान
सिंगापुर व सह संस्थापक
विहंगम योग सिंगापुर
सिंगापुर

मनुष्य हमेशा से प्रगति चाहता है। वह प्रगति सिर्फ धन -दौलत, रिश्ते, मकान, सामाजिक शक्ति, मान-सम्मान के रूप में ही हो - ऐसा आवश्यक नहीं। सबसे बड़ी प्रगति आंतरिक होती है। कई जन्मों के परत-दर-परत जमा किये काई-रूपी अनावश्यक आदतों की सफाई कर स्वयं से मिलने के मार्ग पर प्रशस्त हो शुद्ध बन आत्मिक-शांति और दिव्यता की खोज में संलग्न रहने की पूँजी सबसे महत्वपूर्ण है।

हम उपर्युक्त किसी भी प्रगति की बात करें, समस्याओं का सामना किये बिना कोई लक्ष्य पूर्ण नहीं होता। जितना बड़ा लक्ष्य, उतनी ही बड़ी मात्रा में समस्या। सुरसा-सा विकराल मुँह फाड़े, पहले से तैनात ! कई इनसे भिड़ जाते हैं। जीत भी जाते हैं। लेकिन असंख्य को निगल गयी ये! विकराल है! कोई अंत नहीं। एक नहीं, अनेक हैं!

किन्तु समस्या वह अवसर है जो मुझे उत्तरोत्तर प्रगतिशील होने की आकांक्षा प्रदान करती है। जो भी समस्या मेरे समक्ष प्रस्तुत होती है, चाहे जिस किसी रूप में भी हो, वह मुझे मेरी स्वयं की कमियों को दर्शाती हैं। अपने अंदर झाँकने का मुझे अवसर मिलता है। अपनी थाह नापने का अवसर! कहाँ तक प्रगति हुई है – इसकी जाँच करने का अवसर! माप-दंड के इसी खेल में विकास की कुँजी छिपी दिखती है। माध्यम चाहे कुछ भी हो। वह समस्याजनक स्थिति स्वयं एक माध्यम बन प्रकट होती है – एक मार्गदर्शक के रूप में।

समस्या का सामना करने की इच्छा ही समस्या के सामने खड़े रहने की ताकत देती है – प्रेरणा चाहे कुछ भी हो ! और जब मैं उसे एक अवसर के रूप में देखता हूँ तो इच्छा स्वतः जाग जाती है – उससे मिलने की। तब सबकुछ सकारात्मक दिखने लगता है। वैसी स्थिति में मैं एक धीर-वीर के समान उन समस्याओं से भागता नहीं, बल्कि उनका स्वागत करता हूँ। उन समस्याओं का सामना करने से अच्छा भला और क्या हो सकता है, जिनके सहारे मैं अपने अंतरतः में झाँक पाता हूँ? वे समस्यायें ही तो सबसे अपने हैं जो मुझे मेरे स्वयं से मिलाने को आतुर हैं ! कितना उपकार है समस्याओं का मेरे ऊपर !!

समस्या मेरे लिए वरदान है। इनके रुक जाने से लगता है मेरी प्रगति रुक गयी। इनके ओझल हो जाने से लगता है वरदान ख़त्म हो गया, मैं थम-सा गया।

ये मेरे अच्छे मित्र हैं, सखा हैं। मैं इनसे मिलते रहना चाहता हूँ। आखिर मित्र, सखा ही तो प्रगति में सहयोगी होते हैं ! मैं भला उन्हें अपने पास आने से ऐसे ही रोक सकता हूँ? मैं भला उन्हें आते देख भाग कैसे जाऊँ? उन्हें आते देख मेरी घिग्घी क्यों बंध जाये? मैं दुखी नहीं बल्कि प्रफुल्लित होता हूँ – मेरा दोस्त आया है, कुछ साथ लाया है। मेरे उत्थान का अवसर लाया है। सहृदय धन्यवाद ऐसे सभी सखा का, सभी समस्याओं का – जो मेरे आतंरिक चमक का कारण बन मुझे निखार देते हैं !

****

अख़बार पढ़ने का समय!

८ मार्च - अंतर्राष्ट्रीय महिला दिवस

देर रात टीना का फ़ोन बजता है!

“कहाँ रहती हो टीना? आज ‘महिला दिवस’ था! तुम आईं नहीं कार्यक्रम में? इस बार की थीम ‘इक्कीसवीं सदी में महिला समानाधिकार’ थी!” सुधा ने फ़ोन उठाते ही कहा।

“ओह, मुझे तो ध्यान ही नहीं रहा।”

“तुम्हें ध्यान नहीं रहा? फ़ेसबुक से अख़बार तक, इसी की सुर्खियाँ छाई हैं। और तुम तो एक ज़माने में ‘डिबेटिंग चैंपियन’ थीं। हम सब तुम्हें ‘चलता-फिरता अख़बार ’ कहते थे। अब क्या हुआ? अख़बार नहीं पढ़ती?”

“अरे, आजकल अख़बार पढ़ने का समय नहीं मिलता।”

“क्या कहा? अख़बार पढ़ने का समय नहीं मिलता? क्यों भई? दिन भर तो घर पर रहती हो, सब कामों के लिए बाई भी लगी हुई है। सुबह से रात तक समय ही समय

रीना दयाल
हिंदी शिक्षिका, लेखिका और कवयित्री
सिंगापुर

रहता होगा।"

"हाँ, सही कहती हो सुधा! शायद मेरी ही कमी है। कल से रोज़ सुबह चाय के साथ अख़बार पढ़ा करूँगी।"

दो दिन बाद - फ़ोन की घंटी फिर से बजती है - ट्रिन-ट्रिन!

"चाय पी ली टीना? गरमागरम चाय की चुस्कियों के साथ अख़बार पढ़कर तो पुराने दिन याद आ गए होंगे।"

"चाय कहाँ! चाय तो ठंडी हो गई .... बच्चों के टिफ़िन पैक करते-करते पीना ही भूल गई।"

"तुम भी ना! उनके स्कूल जाने के बाद दोबारा बना लेतीं। दो घड़ी सुकून से बैठ भी जातीं और अख़बार पढ़ना भी हो जाता। इस बहाने कुछ ज्ञान ही बढ़ जाता!"

"अरे बच्चों के जाने के बाद तो समय पंख लगाकर उड़ गया। बाई नहीं आई थी तो जल्दी-जल्दी नाश्ता-खाना-सफ़ाई करके माँ की दवाई और सब्ज़ियाँ लेने गई। लौटते समय छोटी ईशा को प्ले स्कूल से वापस भी लाना था।"

"फिर?"

"फिर क्या, ईशा घर में घुसते ही कितना धमाल मचाती है, तुम्हें नहीं पता? किसी के बस में नहीं आती। जैसे-तैसे खाना खिलाकर सुलाया तो अनन्या के आने का वक़्त हो गया।"

"उसके बाद?"

"उसके बाद क्या ? दोपहर के खाने के बाद किचन साफ़ करके बाहर आई तो अनन्या ने कहा कि कल उसका साइंस का टेस्ट है। बस उसी की तैयारी करवाते-करवाते कब शाम हो गई, पता ही नहीं चला।"

लघु कथा -सिंगापुर से

"अच्छा? तो फिर शाम की चाय के साथ ही अख़बार उठाकर देख लिया होता।"

"अरे कहाँ, कल रात को तो मंजू दीदी खाने पर आई थीं। उन्हें अपने क्लब की तरफ़ से 'स्त्री -शक्ति सम्मान' जो मिला है। माँ-बाबूजी को वही दिखाने लाई थीं।"

"ओह! पर दीदी तो घर की ही हैं ना, उनके आने पर क्या फॉर्मेलिटी?"

"नहीं, नहीं, पिछली बार वे नाराज़ हो गई थीं कि जीजाजी के लिए नाश्ते में सिर्फ़ बिस्किट-नमकीन रख दिए इसलिए इस बार माँजी ने पहले से ही 'थ्री कोर्स मेन्यू' बनाकर रख दिया था।"

"अच्छा? तो फिर माँ भी तुम्हारे साथ किचन में लगी रही होंगी। इतनी सारी चीज़ें बनाना अकेली के बस का काम कहाँ?"

"अरे, उनसे कैसे काम करवा सकती हूँ? दोपहर को उनके आराम का समय होता है और शाम को तो ज़ूम सत्संग होता है।"

"सही कहती हो, सत्संग के बहाने उन्हें भी चार लोगों से मिलने का मौका मिलता है। अब इस कोरोना के मारे कहीं आ-जा भी तो नहीं सकतीं।"

"अच्छा सुनो, आजकल तो राहुल भी 'वर्क फ्रॉम होम' कर रहा है। उससे थोड़ी मदद तो मिल ही जाती होगी।"

"राहुल, उसे तो खाना भी कमरे में पहुँचाना पड़ता है। दिन-भर मीटिंग के बाद ज़रा देर टी.वी. देखने को बैठे और मैं किचन में फँसा दूँ, ये कहाँ तक सही है?"

"और तुम? तुम्हारे लिए अख़बार भी पढ़ने का समय न निकाल पाना, क्या ये सही है?"

"निकालूँगी मैं, तुम चिंता मत करो। अभी फोन रखो, आज माँजी का उपवास है। मुझे फलाहार बनाने जाना है।" कहते हुए टीना ने फ़ोन रख दिया।

उधर सुधा सोच रही थी कि 'महिला समानाधिकार' का अर्थ क्या है?

****

फिर गढ़ेंगे प्रीत की किवदंतियाँ

फिर गढ़ेंगे प्रीत की किवदंतियाँ

चाँदनी-सी झिलमिलाती पंक्तियाँ,
झील की लहरें करें फिर संधियाँ।

आगमन टेसू सजे वातास का,
दे निमंत्रण नेह की अभिव्यक्तियाँ।

मौन मुखरित प्रीत के संवाद हैं,
पढ़ रहे जैसे उदर की चिट्ठियाँ।

देख कर इस जादुई अहसास को,
लो प्रखर हैं उर अरुण की रश्मियाँ।

धूप से अब नेह की लेकर तपन,
फिर गढ़ेंगे प्रीत की किवदंतियाँ।

भाव शुचिता को सबल कर नेह से
कल उचारेंगे नवल कुछ उक्तियाँ।

पेड़-पौधे पुष्प उपवन खिल उठे,
कर रही मनुहार फिर पगडंडियाँ।

****

डॉ प्रतिभा गर्ग
लेखिका
सिंगापुर

जापान - एक विशेष पहचान

भारत में युवावस्था के दौरान 'मेरा जूता है जापानी ये पतलून इंग्लिस्तानी...' और 'लव इन टोक्यो' जैसे बॉलीवुड के गाने सुने थे। इस के अतिरिक्त पाठ्यपुस्तक में दर्शाया जापान का नक्शा और ये जानकारी कि वहाँ सूरज सबसे पहले निकलता है बस इतना ही जानते थे। प्रौढ़ावस्था में जब नौकरी के सिलसिले में सिंगापुर आना हुआ तब यहाँ की जापानी कंपनियों से संपर्क बना , कुछ जापानी सहयोगियों से परिचय हुआ और धीरे-धीरे इस देश के बारे में अधिक जानने की इच्छा जागी। साल 2007-2008 में जापान यात्रा का संयोग बना। अपनी पत्नी और छोटे बेटे के साथ मैं सिंगापुर से टोक्यो जाने वाले विमान में सवार हुआ। संभव है अधिकतर पाठकों ने भी जापान भ्रमण किया हो लेकिन मैं जापान से जुड़े हुए अपने नज़रिए के आधार पर अपना संस्मरण साझा कर रहा हूँ।

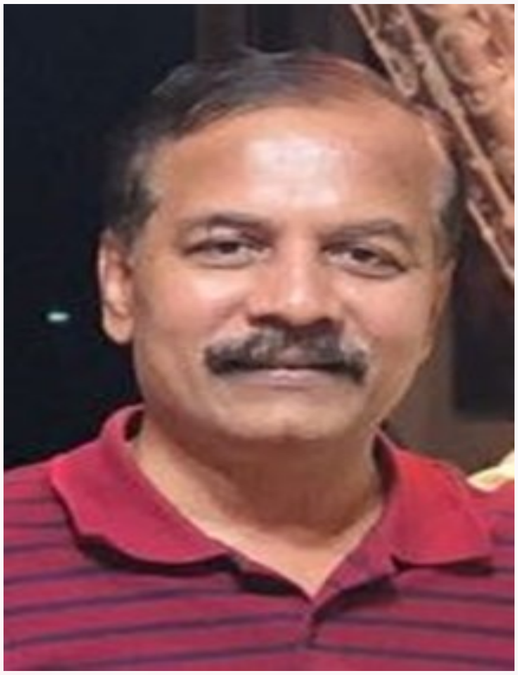

नंदकुमार देशपांडे
निदेशक-स्विस कंपनी
लेखक व कवि
सिंगापुर

टोक्यो के नारिटा हवाई अड्डे से हमने रेल

पकड़ी और योकोहामा शहर पहुँचे। वहाँ हम अपने एक भारतीय मित्र के परिवार के साथ उनके घर पर ठहरे। मित्र का घर तो एक आलीशान बंगला था। ठंड का मौसम था, दिसंबर का तीसरा सप्ताह और क्रिसमस के दिन थे। घर के बने बढ़िया भारतीय भोजन का स्वाद लेकर हम शाम को आस-पास के इलाके में घूमने निकले। मेरे मित्र ने बताया कि जापान के कुछ पारम्पारिक परिवारों में एक रिवाज है जिसमें क्रिसमस के समय घर के स्वागत कक्ष में बड़ी अच्छी सी रोशनाई और सजावट की जाती है। बिना घरवालों से जान-पहचान के भी हम उनके घर जाकर देख सकते हैं। ये सुनकर मुझे बहुत आश्चर्य हुआ। मैंने कहा कि चलो चलकर देखते हैं। हमने लगभग 7-8 घरों की सजावट देखी । एक से बढ़कर एक सुन्दर सजावट और रचनाएँ देखने का सौभाग्य प्राप्त हुआ । अनजान होते हुए भी घर के मालिक ने बड़े अदब से हमारा स्वागत किया। यह विशेष बात देख कर बड़ा आनंद आया। एक और मज़ेदार बात ध्यान में आई कि उनके घरों में भोजन के मेज़ के पास एक बड़ी ऊँची कुर्सी और उसकी बगल में एक ज़रा छोटी सी, नाटी कुर्सी रखी थी। मैंने मित्र से पूछा ऐसा क्यूँ तो उसने बताया कि पिछली पीढ़ी के जापानी लोग घर के प्रमुख पति की कुर्सी बड़ी और ऊँची रखते थे तथा पत्नी की कुर्सी छोटी रहती थी। बात कुछ अजीब लगी , लेकिन शायद आज भी जापान कुछ हद तक पुरुष प्रधान देश इसी सोच के कारण होगा ।

दूसरे दिन हम पास वाले एक बौद्ध मंदिर को हो आये। काँसे की बनी लगभग डेढ़ माले जितनी गौतम बुद्ध की भव्य प्रतिमा देखी। आग्नेय आशिया जैसे ही इतनी दूर-दूर तक बौद्ध धर्म का प्रभाव देख कर मन को संतोष हुआ। उसी दिन हमने जापान रेल विभाग से एक हप्ते भर का JR /जापान रेल पास ले लिया जिससे किसी भी ट्रेन में किसी भी वक्त सफर किया जा सकता था। केवल कुछ विशिष्ट बुलेट ट्रेन में यह पास चलेगा नहीं , यह जानकारी हमें दी गई। बस फिर क्या था... हम तीसरे दिन सुबह ही क्योटो

संस्मरण- सिंगापुर से

के लिए रवाना हो पड़े। क्योटो शहर हमें अच्छा लगा। क्योटो को उल्टे से लिखो तो टोक्यो होता है यह बात मेरे ज़ेहन में आई। प्राचीन जापानी संस्कृति और कई बौद्ध मंदिर यहाँ के दर्शनीय स्थलों में सम्मिलित हैं। मुझे विशेषकर - एक हजार बुद्ध प्रतिमाओं का एक मंदिर आज तक याद है। एक अलग ही तरीके की कुशल क़ारीगरी यहाँ देखने में आती है। दिन भर रेल सफर का आनंद लेकर हम देर रात मित्र के घर लौटे थे।

जापानी रेल के बारे में बात कही जाए और उनके अनुशासन का उल्लेख न हो तो कुछ अन्याय होगा। वक़्त की पाबंदी , स्वच्छता और अनुशासन -प्रिय लोग देखकर ऐसा लगा - अनुशासन शब्द इनको देख कर ही शब्द-कोष में लाया गया होगा। रेल के डिब्बे में प्रवेश करते समय लोग सीधी कतार में बिना किसी हलचल के शांति से पेश आते हैं। यह तो शासन और अनुशासन के लिए जाने माने सिंगापुर से भी एक कदम आगे दिखाई दिया।

अगले दिन हम लम्बी दूरी की बड़ी तेज रफ़्तार वाली बुलेट ट्रेन शिंकान्सेन नाम से जानी जाने वाली "नोज़ोमी " पर सवार हुए। टिकट और पास की जाँच करने वाले अफ़सर हर बार कमर में आगे झुककर सब का अभिवादन कर रहे थे। हमारे बेटे को यह बात बहुत अच्छी लगी और हर बार वह भी उठकर उस कलेक्टर का झुककर अभिवादन करने लगा। वह अफ़सर भी उसे मुस्कुराकर प्रतिक्रिया देता रहा। अधिकतर जापानी जन मित्रता का भाव रखते हैं यह बात मैंने जान ली। एक बार सुनने में आया क़ि एक ट्रेन ५-5 मिनट देरी से पहुँची तो सारे प्रवासियों को टिकट का भुगतान वापस मिला। 300 कि मी रफ़्तार से चलने वाली रेल में सफर करने का हमारा पहला ही अनुभव था। वह तेज गति हमें एक तरह से हर पल जापान देश की प्रगति का अहसास दिलाती रही। यहाँ एक और विशेष बात बतानी होगी - हमने देखा कि सफ़र के

आख़री स्टेशन पर जापानी कर्मचारी केवल ढाई से तीन मिनटों में सम्पूर्ण बुलेट ट्रेन की सफ़ाई कर देते हैं। ऐसी कार्यकुशलता विश्व के किसी भी देश में शायद ही देखने को मिले।

हम जापान के इतिहास में अतिचर्चित किन्तु वेदना देने वाली जगह हिरोशिमा पहुँचे। अगस्त १९४५में दूसरे विश्व महायुद्ध में अमेरिका द्वारा किए गए परमाणु विस्फोट से पूरा हिरोशिमा नगर श्मशान में बदल गया जहाँ आज मृतकों की स्मृति में एक स्मारक बनाया गया है। उसे देखते समय मेरी और मेरी पत्नी की आँखें छलक उठीं और हृदय नम हो गए। दिनदहाड़े शहर पर गिरे उस बम ने पूरा शहर तबाह कर दिया था। पाठशाला जाते हुए शिशुओं के विदीर्ण वस्त्र वहाँ रखे गए थे जिन्हें देखकर हम अपने आँसू नहीं रोक सकें।

हिरोशिमा की योकोहामा से दूरी और रेल सफर की अवधि ध्यान में रखते हुए हमने वहीं पर एक होटल में रात्रिविश्राम किया। जापान के होटल विश्व भर में सबसे महँगे साबित होंगे। कमरे का नाप साधारण होटल कमरे से बिलकुल आधा और दाम दुगना ऐसा हिसाब है। एक व्यक्ति अगर घूम जाए तो हाथ से बाजू वाले के मुख पर तमाचा लगेगा इतना छोटा कमरा लेकिन सुख सुविधाएँ एकदम आधुनिक और स्वच्छता तो पूछिए मत। जापान के टॉयलेट भी अत्याधुनिक व स्वचालित हैं। इस मामले में भी जापान पूरे विश्व में सबसे आगे है। मेरे बेटे को मानो उससे खेलने का शौक़ लग गया था। अगले दिन दोपहर को हम फिर बुलेट ट्रेन हिकारी का आनंद लेते हुए योकोहामा पहुँचे। बाकी समय हमने घर पर ही गपशप में गुजारा।

यात्रा के छठे दिन हम टोक्यो के डिज़्नीलैंड के लिए चल पड़े। उस कंपकपाती ठण्ड में भी हमने चेहरे पर हँसी दर्शाने का अभिनय करते हुए वहाँ की सारी सवारियों का आनंद लिया। मैं इससे पहले अमेरिका के लॉस

संस्मरण- सिंगापुर से

एंजेल्स स्थित बड़ा डिस्नीलैंड घूम चुका था लेकिन फिर भी जापान का डिज़्नीलैंड भी मुझे अच्छा लगा। उसी शाम को हमारे मित्र और उनकी पत्नी दोनों हमें शहर में मिले और वहाँ से हम टोक्यो के प्रसिद्ध इलेक्ट्रॉनिक बाज़ार अखिया बारा नामक स्थान पर पहुँचे जहाँ जाकर हमारी आँखें चकाचौंध रह गई। दुनिया में कोई भी नया उपकरण बाज़ार में आता है तो सबसे पहले इसी जगह विक्री के लिए उपलब्ध होता है। सोनी , यामाहा , पैनासोनिक , शार्प , केनवुड , हिताची और सैंकड़ों अन्य ब्रैंड के उपकरण देखकर हम दंग रह गए। लेकिन दाम पूछो तो आसमान को छूने वाले। उस ठण्ड में भी मेरे तो पसीने निकल आए बड़ी मुश्किल से मैंने लड़के के लिए एक वीडियो गेम लेकर बटुए को अधिक तकलीफ़ न देने में सफलता पाई और वहाँ से खिसकना ही बेहतर समझा।

परमाणु बम की विभीषिका झेलने के बाद एक नए सिरे से उठकर इस देश ने अभियांत्रिकी के क्षेत्र में विश्व में जो नाम बनाया है वह प्रशंसनीय है। समस्त विश्व भर को ये कारें तथा आधुनिक उपकरण बेचता है यह बात अत्यंत सराहनीय है इसमें कोई संदेह नहीं।

सातवें दिन हम सब मित्र के परिवार सहित , नाताल की छुट्टी पर दो दिन के लिए नायबा नामक प्रसिद्ध स्कीइंग रिसॉर्ट पर गए। चारों ओर ढेर सारा बर्फ ही बर्फ़ था हम सबने बड़ी उत्सुकता से स्कीइंग के ख़ास गियर/पहनावे ले तो लिए लेकिन आगे क्या ? हम बड़ी मुश्किल से दो क़दम आगे चलने के बाद ज़ोर से नीचे गिर पड़ते। वो तो बदन पर मोटे-मोटे गरम कपड़ों ने बचा लिया। आसपास ४-५ साल की आयु की जापानी लड़कियाँ भी मज़े से स्कीइंग का आनंद ले रही थीं और उन्हें देखकर हमें अपने आप पर शर्मिंदगी महसूस हो रही थी। कुछ देर बाद जब शरीर की हड्डियाँ बातें करने लगीं तो हम चुपचाप होटल के कमरे में लौट गए उस हालत में , मुझे याद है उस रात

को हमें नींद कुछ अधिक गहरी आई। दूसरे दिन नाश्ता करके हम कार पार्क आये तो हमारे मित्र की कार को ढूँढने में हमें अच्छी-खासी मेहनत करनी पड़ी। सारी कारें आधी से अधिक शुभ्र बर्फ़ में डूबकर मज़े ले रही थीं। नंबर प्लेट के बर्फ को लकड़ी से हटाते-हटाते हमने आख़िरकार कार ढूँढ ही ली।

उस दिन हम एक और प्रेक्षणीय स्थान माऊंट फुजी पहुँचे। इसका शिखर हमेशा बर्फ से आच्छादित होता है। बड़ी दूरी से भी इसका विहंगम दृश्य हमें दिखता रहता है। नीचे की तरफ़ यह पर्वत काफ़ी विस्तृत है और ऊपर शिखर एकदम तीक्ष्ण या नोंकदार है। इस पर्वत के आसपास ही एक वाईल्ड लाइफ़ सफ़ारी पार्क (हिंस्त्र पशु संग्रहालय) है। वहाँ भी हम गए। हमारी बंद मोटरगाडी को सिंहों के बड़े से झुण्ड ने घेर लिया। इतने पाससे सिंह की नज़र में नज़र डालकर हमने पहले कभी देखा न था। लेकिन ये पशु उतने खूँखार या डरावने नहीं लगते शायद उन्हें मानवों की संगत में (सेफ डिस्टेंसिंग नियम का पालन करते हुए) रहकर आदत सी हो गई थी ।

दिन क्रमांक नौ की शाम को हम फिर मित्र के योकोहामा स्थित होम स्वीट होम पर पहुँचे। दसवें दिन स्थानीय मॉल में कुछ बचीखुची शॉपिंग निपटा ली। एक बात विशेष रूप से याद रही , मॉल के बाहर एक लम्बी कतार में बड़ी संख्या में हाथ से ढकेलने वाली बच्चा गाड़ियाँ लगी हुई थी। मेरी पत्नी ने आश्चर्य से झांककर देखा कि कैसे ये लोग छोटे नवजात शिशुओं को ऐसे बाहर छोड़ जाते है ? लेकिन सच निकला कुछ और ही , हर बच्चा गाड़ी में से निकला कुत्ते का छोटा सा पिल्ला। उन्हें सुन्दर , रंगीन टीशर्ट , गॉगल्स पहना रखे थे। क्या शान से वे श्वान विश्राम कर रहे थे। मैंने सोचा अगले जनम में कभी अगर श्वान हुए तो जन्म स्थान यही देश होगा तो बेहतर होगा।

संस्मरण- सिंगापुर से

एक -दो बार हमें जापान में टॅक्सी लेनी पड़ी थी। दुनिया की सबसे महँगी टॅक्सी भी शायद जापान में होगी। एयरपोर्ट से शहर के मध्य स्थान तक के किराये का बोर्ड मैंने देखा था US $ 280 । आज हम इस रक़म में बजट फ्लाइट में दक्षिण-पूर्व एशिया के किसी देश का जाना -आना कर सकते हैं। यहाँ के टैक्सी ड्राईवर का पहनावा भी बड़ा रुआबदार होता है मानो किसी हवाई जहाज़ के पायलट से कम नहीं। मैंने मन ही मन सोचा , क्यों न इसके कान में ज़ोर से चिल्लाकर पूछूँ , क्या भाई अब टैक्सी हवा में उड़ाओगे क्या ? उसकी टॉप मिलिटरी अफ़सर जैसी टोपी और सूट बूट की तुलना में बगल वाली सीट में बैठकर अपने ढीलेढाले गरम कपड़े देखकर मेरा थोड़ा सा शरमा जाना स्वाभाविक ही था।

कुल मिलाकर जापान देश की हर एक बात विशेष लगी , यहाँ हमें लगभग ८5 या ९0 वर्ष के लोग अच्छे से चलते-फिरते, अच्छी सेहत में नज़र आए। संभवतः सुशी और सैलमन को अपने आहार में लेना ही उनके दीर्घायु होने का राज़ है। इनकी देहायष्टि भी वैसे ज़्यादातर दुबली -पतली सी है लेकिन प्रसिद्ध सुमो कुश्ती के पहलवान भी तो केवल इसी देश में होते हैं। ग्यारह दिन की जापान सैर के बाद हम सिंगापुर लौटे वहाँ की अनगिनत अच्छी यादें सदा के लिए साथ लेकर। दुनियाभर में लगभग हर देश में आपको जापानी कंपनियों के व्यापार और कारखाने मिलेंगे। इन्होने विश्व में काफ़ी कुछ योगदान दिया है। दूसरे विश्व महायुद्ध में भले ही इन्होने जर्मनी के हिटलर का साथ दिया था , पर उसकी भारी क़ीमत ये दे चुके हैं।

सारांश में इतना ही आगे लिखना चाहूँगा कि,

जीवन में एक बार अवश्य हो आना जापान

सारे जगत में जापान की एक विशेष पहचान !

इंद्रधनुषों का देश मॉरीशस

इंद्रधनुषों का देश मॉरीशस

हिन्द महासागर के मध्य, एक तारा चमक रहा।

बहुमूल्य रत्न सिंधु का, प्रकाश पुंज सा दमक रहा।।

मकरअयनवृत रेखा पर, बसा मॉरीशस एक टापू है।

लम्बाई जिसकी चालीस मील, और चौड़ाई तीस है।।

सात सौ बीस वर्गमील में फैला, मोती के आकार का।

अन्य द्वीप भी बसे चहुँ ओर, पर सितारा यह संसार का।।

चारों ओर इस टापू के, हैं फैली गगनचुम्बी पर्वतमालाएँ।

शीश उठाये वे गर्व से, सौंदर्य में चार चांद लगाएँ।।

कल्पना लालजी
लेखिका और कवयित्री
विभिन्न पुरस्कारों से सम्मानित
मॉरीशस

समुद्री लुटेरों ने आकर यहाँ, लूटा धन छुपाया था।

निर्जन घने वनों का भी, उन्होंने पूरा लाभ उठाया था।।

सन पंद्रह सौ सात में, आये थे यहाँ नाविक पुर्तगाली।

देखा जब पक्षी डोडो सबने, छाई थी मुख पर हरियाली।।

राजहंस फिर समझ उसे, वे राजहंसों के इस देश में।

पूरे पंद्रह वर्षों तक वे, बसे रहे यहाँ नाविक वेश में।।

काव्य-गाथा — मॉरीशस से

आगमन हुआ तब डचों का, सन पंद्रह सौ अठावन में।
तूफानों से बचते-बचते वे, आ पहुँचे थे इस आंगन में।।
मोरिस वान नासो नामक, राजकुमार के सम्मान में।
विख्यात मॉरीशस भी हुआ, इस सारे जहाँन में।।
फैला प्रकोप महामारी का जब, और नष्ट-भष्ट हुआ सब।
हो निरुत्साहित उन्होंने, द्वीप से नाता तोड़ा तब।।

लाभ उठाया अवसर का, और फ्रेंचों ने इसको जा पकड़ा।
सत्रह सौ पंद्रह ईसवीं में, अपनी ताकत से जा जकड़ा।।
शासक बनकर द्वीप का, बदल डाली इसकी काया।
इल दे फ्रांस नाम रखा, और फिर अपना राज्य बसाया।।
विस्तार हुआ उस समय कृषि का, फ्रेंचों के शासन काल में।
फ्रेंच उपनिवेश के रूप में, सम्पन्न हुआ हर हाल में।।
दासों के सहयोग से भी, तब पलटी काया देश की।
राह नवीन उन्होंने जा खोजी, सेवा सबने विशेष की।।

सोने पर सुहागा समझो, नया गवर्नर एक आया।
माहे दे लबुरदोने ने तब, रहने योग्य द्वीप सजाया।।

काव्य-गाथा – मॉरीशस से

राजधानी पोर्ट लुईस को, उसने सुंदर और बनाया।
नवीन बंदरगाह ने तो, उसमें चार चाँद लगाया।।
यह काल लेकर आया, शकर का फिर उत्पादन ऐसा।
अन्य देशों में ढूँढे से भी, मिलता न इसके जैसा।।
पाम्प्लेमूस उद्यान का, पीएट पोवर ने विस्तार किया।
भाँति-भाँति के वृक्षों से, उसका फिर सिंगार किया।।

व्यापारिक दृष्टि से भी, द्वीप यह जाना माना था।
नाविकों की खातिर तो, यह अनमोल खजाना था।।
फ्रांसीसी जन क्रान्ति ने तब, खेला अनोखा खेल।
हलचल खूब मची यहाँ भी ,कैदियों ने तोड़ी जेल।।
आपस में लड़ने लगे तब, अंग्रेज़ी और फ्रेंच।
सोचा छोटी सी यह धरती, बने सामरिक मंच।।
लार्ड मिंटो था दूरदर्शी, कर दिया शुरू अभियान।
बुर्बो और रोड्रिग से, भागे फ्रेंच बचा कर जान।।

पूरे सैन्य बल के साथ, बोल दिया गोरों ने हल्ला।
मार्ग न सूझा फ्रेंचों को तो, जा थामा संधि का पल्ला।।

काव्य-गाथा – मॉरीशस से

असफल प्रयत्न सारे हुए, फिर भी कोशिशें की हज़ार।
जान बचा कर इस द्वीप से, भागे वे अबकी बार।।
देकर बूर्बो फ्रेंचों को, रोड्रिग गोरों ने हथियाया।
मॉरीशस पर कब्ज़ा कर, अपना उपनिवेश बनाया।।

नामकरण फिर से किया, इस छोटे से द्वीप का।
मॉरीशस तब पड़ गया, फ्रेंचों के इलदे फ्रांस का।।
भारतीय कलकत्ता से लाये, कलकतिया उनका नाम पड़ा।
आज तलक जो न छूटा, ऐसा हृदयों में जा गड़ा।।
सन अठारह सौ चौंतीस में, शर्तबंद की प्रथा चलाई।
अरकाटिये प्रलोभन देकर, करने लगे रोज़ कमाई।।
भोले भाले और गरीब, असंख्य सपने लेकर आये।
पथरीली सूखी भूमि ने, किस्मत उनकी फोड़ी हाय।।

जैसे- तैसे राम-राम कर, इस धरती पर रखा पाँव।
ठोकर ही ठोकर मिली, औऱ मिले घाव पर घाव।।
साहस तब भी न छोड़ा, और लिया धैर्य से काम।
अब कर्म उन्हें करना होगा , आगे भली करेंगे राम।।
गीता औऱ रामायण वे लोग, थे लाये अपने साथ।

आगे सब बढ़ने लगे, थाम एक दूजे का हाथ।।

अंग्रेज़ ज़मीनों के थे मालिक, मिल कारखाना सब उनका।

कमाई उनके हाथ में थी , सब पर चलता था बस उनका।।

निर्दयी क्रूर गोरे सब मिलकर, चालाकी से काम निकालें।

रखा हमको शिक्षा से वंचित, अनपढ़ फिर कैसे होश संभाले।।

परिश्रम होता था मजदूरों का, तिजोरियाँ मिल मालिक भरते।

उनकी अंतिम सांस तक, गिरमिटियों के सौ आँसू बहते।।

गोरों की गाली मिलती उनको, कोड़े खाते वे हर बात पर।

भूखा पेट आंतें अकुलातीं, झिड़कियाँ खाते बेबात पर।।

सन उन्नीस सौ एक में, तब आये यहाँ महात्मा गांधी। प्रवासियों के हृदय में, अब एक नई आशा जागी।।

स्वागत उनका तब किया, व्यथित भारतीय भाइयों ने।

उचित शिक्षा बच्चों को दो, खोली आँखें सच्चाइयों ने ।।

मणिलाल डॉक्टर भी आये, मॉरीशस की इस भूमि पर।

समाज सेवा का व्रत लेकर, उतरे वे कर्म भूमि पर।।

अंग्रेज़ी और हिंदी में, पत्र निकाला "हिन्दुस्तानी"।

नये सिरे से फिर छेड़ी, आज़ादी की जंग पुरानी।।

महाराज सिंह ने भी आकर, अलख जगाई देश में।

काव्य-गाथा — मॉरीशस से

शर्तबंदी की प्रथा तब, करवाई बंद ऋशिवेश में।।

आर्य समाजी जाग उठे, दयानंद की वाणी सुन।
सम्मान नारियों को दिया, उठ माता कल्याणी सुन।।

खेली स्वतंत्रता की होली, तोड़ी ज़ंज़ीर गुलामी की।
अमन चैन से था सींचा, आवाज़ न आई गोली की।।
बारह मार्च सन अड़सठ, दिन आखिर वह भी आया।
आसमान पर पहली बार, अपना चौरंगा लहराया।।
आओ सुनाऊँ मैं गाथा, फिर इस देश में क्या हुआ।
जागरण का बिगुल बजा, नवीन सूर्य उदय हुआ।।
अंधकार का डूबा सूरज, नवप्रभात लेकर आया।
हर्षोल्हास का वातावरण, आज है सर्वत्र छाया।।
शिक्षा की कुंजी से तब, सारे ताले टूट चले।
बाँध प्रेम की डोरी से, धरती अम्बर तक हिले।।

बैठकायें उस समय की, थीं विद्या का अनमोल स्थान।
सर-सर-सर संध्या काली, सामूहिक स्वर में गूंजे गान।।
वेद उपनिषद रामायण, शिक्षा इनकी भी मिलती थी।

भजन कीर्तन और प्रार्थनाएँ, नित सांझ सवेरे होती थीं।।
गुजर चुका था यह देश, अब हर पीड़ा हर त्रास से।
हुआ उजाला घर-घर में, चमके चेहरे नई आस से।।
मेहनत सबकी रंग लाई फिर, देश में धीरे-धीरे।
उन्नति के मार्ग पर अब, चल पड़े वे सांझ-सवेरे।।

हिंदी साहित्य व संस्कृति, इस देश में फूली फली।
सुर संगीत की लय पर तो, नवीन हिन्दू संतति पली।।
जन कल्याण की दिशा में, अनुपम ऐसे कार्य हुए।
शिक्षा स्वास्थ्य सेवाओं ने, लोगों को उपहार दिए।।
शिक्षा रत्न अनमोल है, बच्चों को जो मिल गया।
ज्ञान रूपी इस नैया से, मॉरीशस मानो तर गया ।।
आज्ञानता एक दलदल है, जिसका कोई अंत नहीं।
शिक्षा से ऊँचा जानो, उन्नति का कोई मंत्र नहीं।।
संतानें और प्रगति करें, इस आशा के साथ-साथ।
पाठशालाएँ खुलने लगीं, बैठकाओं ने बाँटा हाथ।।
धार्मिक और सांस्कृतिक, शिक्षाएँ भी बंटने लगीं।
पर्दे आँखों से जब हटे, अंधियारी तब छंटने लगी ।।

काव्य-गाथा – मॉरीशस से

राम कृष्ण बुद्ध व ईसा, ये आशाओं के स्त्रोत्र थे।
गांधी बाबा की ही सीख से, मानव ओत-प्रोत थे।।

आर्य समाज ने भी फूँक दिया, शंख नाद चहुँ ओर।
कारी अंधियारी के बाद उठी, मीठी- मीठी नव भोर।।
हम हिन्दू न मुस्लिम हैं, माटी से अपना नाता।
दीवार उठाना धर्म की , है कभी नहीं हमको भाता।।
शिक्षा-दीक्षा फली यहाँ, भाईचारे का हुआ विस्तार।
कर्तव्यों का पालन हो, रामराज्य का है यह सार।।
समुद्र तट इस देश के, सच जानो हैं बड़े रमणीक।
विदेशी पर्यटक यूरोप के, करें क्रीड़ा होकर निर्भीक।।

विशाल पक्षी डोडो था ऐसा, जैसा आज दिखता नहीं।
क्षुधा तृप्ति के काम आया, डच शिकारी बोला हमसे यहीं ।।
पवित्र मीठे जल का ताल, गंगा तालाब है इसका नाम।
शिव पूजा होती है इससे, काँवरथी जाते शिव के धाम।।
जड़ें ज्यों वट वृक्ष की, स्वम् फैल जाती चहुँ ओर।
स्वतंत्रता की लालिमा भी , लाई मॉरीशस में नव भोर ।।
आज कर रही है प्रगति, इंद्रधनुषों की यह धरती।

अपने अनुपम सौंदर्य से, है जग को आकर्षित करती।।

नई शताब्दी देखो है लेकर आई, कम्प्यूटर का नवजाल।

बदल दिए जिसने आकर, जीवन के सारे सुर ताल।।

आत्मविश्वास और सम्मान का, बीज उगा जन-जन में।

प्रेम और विश्वास भी, महक उठा अब तन-मन में।।

अपना राष्ट्र ध्वज हमें अब, प्राणों से भी है प्यारा।

सम्मान होवे मातृभूमि का, है सबका एक ही नारा।।

भूलेंगे न हम उनको, जिन्होंने हैं प्राण गँवाये।

देश भक्तों की पंक्ति में, अपने- अपने नाम लिखाये।।

नील गगन पर चमक रहा, हिन्द महासागर का तारा।

पूरब-पश्चिम और उत्तर दक्षिण, फैला रहा है उजियारा।।

वो साँवरी सी लड़की

वो साँवरी सी लड़की

कच्ची माटी के कोठे के झरोखे से झाँकती
वो साँवरी सी लड़की......
सूप से फटकते गेहूँ को उछलते
देख उछल जाती,
अगले ही पल
उन बूढ़ी आँखों को और
गालों में गहरी झुर्रियाँ देख
संकुचित हो उठती
वो साँवरी सी लड़की......
कभी सूप के संग खनकती
मटमैली चूडियों को देख
खनक उठती .....
गोबर से घर लीपती माँ
नयनों से बच्ची को आंक रही थी
पढ़ रही थी

सुरभि डागर
लेखिका
बिजनौर (उत्तर प्रदेश) भारत

उन नटखट उमड़ते भावों को......

नारंगी फ़्रॉक में

सूप में गेहूँ के दानों सी

उझलती आ पहुँची

वो साँवरी सी लड़की....

गेहूँ के दानें उलझकर सूप में ही

वापस आते हैं बिटियाँ

दादी के भावों को अनसुना कर

ताजे लिपे गोबर पर

पद चिन्ह बनाती

उम्मीद की ओर

पग अग्रसर कर

बढ़ जाती है

वो साँवरी सी लड़की ......

****

अठन्नी- एक प्रेम कथा

इस बार बहुत दिनों के बाद गाँव जा रहा हूँ। लगभग एक साल बाद। पिछले साल गाँव नहीं जा पाया था। मेरा बीए का एग्ज़ाम चल रहा था। उसमें भी दो पेपर रद्द हो गए। बाद में उनकी परीक्षा देने यूनिवर्सिटी जाना पड़ा। मैं चाहकर भी गाँव जाने की फुर्सत नहीं निकाल पाया। साल में दो ही बार गाँव जा पाता हूँ। एक बार गर्मियों में जब गेहूँ की फसल कट चुकी होती है और दूसरी बार जाड़ों में,छठ के आसपास। पिछले साल जब गर्मियों में गाँव नहीं जा पाया, तो माँ ने यह जुमला बार-बार दुहराया, इस बार नहीं जा रहे हो, अगली बार जाओगे, तो पिछले साल का अनाज कभी नहीं मिलेगा। मुझे पता था, उसका कहना सही है। मगर हर बात की प्राथमिकता होती है। मैं गाँव का अनाज देखूँ कि अपना कैरियर। कहने को खेत बटाई पर है और अनाज का आधा हिस्सा हमारा होता है, मगर सच्चाई यह है कि मिलता हमें एक चौथाई ही है। जो बटाईदार कह देते हैं वही मान लेता हूँ। विकल्प क्या है? अब इतनी

मनोज कुमार वर्मा
भारतीय स्टेट बैंक से सेवानिवृत,
लेखक
सीवान (बिहार), भारत

फुर्सत तो है नहीं कि फसल कटने के समय गाँव जाकर जम जाऊँ। अपने सामने फसल कटवाऊँ। दौनी करवाऊँ। तब जाकर बराबर हिस्सा मिलेगा। अब इतना सब करने लगूँ, तो पढ़ाई-लिखाई बंद हो जाएगी। इसलिए माँ को समझा देता हूँ, जो मिल रहा है उसी पर संतोष करो।

दो साल पहले इन्हीं सब परेशानियों से कुछ खेतों को 'मनी' पर उठा दिया था। साल में अनाज का एक निर्धारित रकम दे दो। वैसे भी गाँव का अनाज बोरों में भरकर शहर लाना काफी श्रमसाध्य और खर्चीला काम है। जितने का बबुआ नहीं उतने का झुनझुना। अब तो गाँव का अनाज गाँव में ही बेच देता हूँ। थोड़ा-बहुत बोरियों में भरकर ले आता हूँ। गाँव से अब इतना ही रिश्ता रह गया है। पापा को अपने वकालत के पेशे में फुर्सत नहीं रहती और मुझे पढ़ाई से।...फिर भी जबतक गाँव का घर है। जमीन है। जाना तो है ही।

छपरा जंक्शन पहुँचा, तो मालूम हुआ बाघ एक्सप्रेस आ रही है। हावड़ा से आनेवाली यह ट्रेन कहने को तो एक्सप्रेस है, मगर छपरा और सिवान जंक्शन के बीच कई स्टेशनों पर रुकती है, जिसमें मेरे गाँव का स्टेशन भी है। ट्रेन आई, तो मैं जहां खड़ा था, वहीं एक जेनरल बोगी लगी। मैं उसीमें चढ़ गया। संयोग से एक खाली सीट मिल गयी। मैं बैठ गया। मेरे सामने वाली सीट पर एक ग्रामीण औरत बैठी थी। घूंघट से चेहरा ढँका हुआ था। साथ में ढाई-तीन साल का बच्चा था -प्यारा सा, गोल-मटोल। मुझे लगा, मुझे देखकर उस औरत ने बच्चे के कान में कुछ कहा है। बच्चे ने पलटकर गौर से मुझे देखा। मुझे भी थोड़ी हैरानी हुई।

मैंने बच्चे को अपने पास खींचा। वह बिना किसी ना-नुकुर के मेरे पास आ गया। उसके गालों को चूमते हुए मैंने पूछा, 'कहाँ से आ रहे हो?'

बच्चा अपनी तोतली जुबान में बोला, ' हबला से।'

'अच्छा! हबला से।...कहाँ जाना है?' मैं बच्चे से बात करने लगा।

'नानी घल।'

'नानी घल जा रहे हो।...क्या नाम है तुम्हारा?'

'लाजा।'..मैं ठठाकर हँसा। 'अच्छा! तुम्हारा नाम भी राजा है और मेरा नाम भी राजा है।'

घूंघट के अंदर से हँसने की मंद ध्वनि बाहर आई। मैं उस औरत से मुखातिब होकर बोला,

'सच में। मेरा घर का नाम राजा ही है।'

वह कुछ नहीं बोली, जैसे उसे पता हो।

माँ ने मेरा छोटा-सा नाम रखा था –'राजा'। और पापा ने? उनकी हर बात में एक तर्क होता है। नाम बड़ा और भारी भरकम होने से अगला प्रभावित होता है इसलिए छपरा के नामी वकील बाबू समरेंद्र प्रताप नारायण सिंह ने अपने इकलौते बेटे यानी मेरा नाम रखा –'राघवेन्द्र प्रताप नारायण सिंह'। मेरा नाम सुनकर लोग कितने प्रभावित होते हैं, यह तो मुझे नहीं पता मगर मैं कितना परेशान होता हूँ, यह मुझे पता है। कोई भी फॉर्म भरने में नाम के लिए निर्धारित खंदों में मेरा नाम नहीं अंटता है। मेरा नाम लेकर मुझे कोई बुलाता भी नहीं है। गाँव, घर, नाते-रिश्तों और स्कूल तक तो, तो मैं राजा ही हूँ। कॉलेज में सब मुझे आरपीएन सिंह कहते हैं। राघवेन्द्र प्रताप नारायण सिंह को कोई नहीं जानता।

.

२

ट्रेन का अगला स्टॉपेज मेरे गाँव का स्टेशन था –'एकमा'। उतरने के समय चढ़नेवालों की भीड़ हो जाती है, इसलिए पहले से दरवाज़े के पास खड़ा होना सुविधाजनक रहता है। यह सोचकर मैं दरवाज़े की तरफ बढ़ा, तो उस औरत ने मुझे टोका, 'हमरो उतरे के बा'। उसके इस अंदाज पर मैं खीजा। उतरना है तो उतरो, कौन मना करता है। मगर उसके

कहने का मतलब था कि मैं उसको उतरने में मदद करूँ। वह झुककर एक बड़ा एयरबैग सीट के नीचे से खींच रही थी। इसके अलावा एक बड़ा झोला था उसके पास। मैंने उसका एयरबैग उठा लिया। बच्चे ने सहज ढंग से मेरा हाथ पकड़ लिया। जैसे मैं उसका कोई सगा सम्बंधी होऊँ। खैर! बच्चों की दुनिया में सब अपने होते हैं कोई पराया नहीं होता है। मैंने उस औरत से कहा, 'आप आगे आइए।' वह मेरे आगे आकर खड़ी हो गयी। ट्रेन रुकते ही चढ़नेवालों ने हड़बड़ी दिखाई, तो मैंने पीछे से डाँटकर कहा, 'पहले लेडीज को उतरने दो।'

हम आराम से प्लेटफॉर्म पर उतर गए।

मेरा गाँव यहाँ से दस किलोमीटर दूर है। पहले तो एकमा से केवल ताजपुर, मांझी के लिए जीप मिलती थी, पर अब मेरे गाँव मुबारकपुर के लिए भी जीप मिल जाती है। यही सोचकर मैं ट्रेन से आया था। एकमा में जीप भी स्टेशन के बाहर नहीं मिलती है, उसके लिए भी पूरा बाज़ार पार करना पड़ता है। मैं उस औरत को प्लेटफॉर्म पर छोड़कर आगे बढ़ने ही वाला था कि उसने फिर टोका, 'हमरो मुबारकपुर चले के बा।'

इस बार मैं वाकई खीज गया। अब जीप स्टैंड तक उसका बैग मुझे ढोना पड़ेगा। वह हावड़ा से मेरे ही भरोसे चली है क्या? लेकिन जब वह जानती है कि मैं मुबारकपुर का हूँ, तो मुझे जानती भी है और मेरे गाँव की भी है। बच्चे का नानी घल! अब चेहरा घूंघट में ढँका है, तो मैं कैसे पहचानूँ? मैंने खीजे अंदाज में बैग फिर उठा लिया। बच्चे ने फिर मेरा हाथ पकड़ लिया।

लेकिन मेरा 'जतरा' ठीक था। स्टेशन से बाहर निकलते ही मेरे गाँव जानेवाली जीप मिल गयी। जीप वाला सवारी की उम्मीद में स्टेशन पर आया था। आगे की सीट तो पहले से भरी हुई थी। पीछे भी दो सवारी बैठी हुई थी। जीपवाले ने मुझे बैग उठाये, बच्चे का हाथ थामें और पीछे घूंघट में चलती हुई औरत को देखकर विवाहित जोड़ा समझ लिया। पीछे की सीट पर आमने-सामने दो सवारियाँ बैठी थी। वह उन दोनों सवारियों को एक तरफ करने लगा, ताकि

कहानी- भारत से

हम 'दम्पति' एक तरफ बैठ सकें। मैं उसकी हरकत से और खीज गया। मैंने उसे रोकते हुए कहा, 'उनलोगों को वैसे ही बैठने दो'। और जल्दी से एक तरफ वाली सीट पर चढ़कर बैठ गया। जीपवाले ने बच्चे को मुझे पकड़ा दिया और बैग छत पर डाल दिया। बच्चा प्रेम से मेरी गोद में बैठ गया, जैसे मैं उसका बाप होऊँ। वह सामनेवाली सीट पर बैठ गयी। हमारे पैरों के बीचवाली जगह में उसका झोला अंट गया। जब वह पूरी तरह व्यवस्थित हो गयी, तो उसने अपना घूंघट ऊपर किया। उसके चेहरे पर नज़र पड़ते ही मैं बुरी तरह चौंक गया। मेरे मुँह से निकलने जा रहा था, तू है। मगर मैंने अपनी जबान संभाल ली। अब वह शादीशुदा है। पहले की तरह तू-तड़ाक बोलना ठीक नहीं होगा। मैंने कहा, 'तुम हो!'

फिर इस सस्पेंस पर झल्लाकर कहा, 'इतना बड़ा घूंघट किसके लिए निकाले हुई थी?'

वह सकुचाकर बोली, 'बोगी में तहरा बगल में हमरा ससुरारी के एगो आदमी बइठल रहलन ह। स्टेशनों पर साथे उतरलन ह।'

उसको देख लेने के बाद मैं सहज हो गया था। मैंने हँसकर कहा, 'कलकत्ता से भागकर आई हो क्या जो ससुरारी के आदमी से डर रही थी?'

जवाब में वह पुराने अंदाज में तमक कर नहीं बोली, भाग के काहे आएम ! इतना ही बोली, 'बाबू के पापा के अपना काम से फुर्सत ना रहे त आ के गाड़ी में चढ़ा देलन ह।'

मुझे ताज्जुब हुआ। गाँव की यह अनपढ़ गवाँर लड़की कोलकाता जाकर इतनी होशियार हो गयी है कि अकेले एक बच्चे के साथ ट्रेन की जेनरल बोगी में बैठकर चौबीस घण्टे का सफर तय करके गाँव चली आई है। बचपन में एक कहावत सुनी थी। पढ़ाओ तो पढ़ाओ, नहीं तो शहर में बसाओ।..अब वह गाँव की गवाँर लड़की नहीं रह गयी है शहर की होशियार लड़की हो गयी है।

३

जीपवाला आगे की सवारियों से भाड़ा वसूलने के बाद पीछे आया, तो मैंने उसका भी भाड़ा दे दिया। उसने भाड़ा देने के लिए अपना छोटा सा पर्स ब्लाउज में से निकालना चाहा, तो मैंने आँखों से बरज दिया। वह मान गई। अपना पर्स अंदर कर लिया। मुझे फिर ताज्जुब हुआ। यह वही लड़की है! इतनी आसानी से कैसे मान गई? उसके तेवर से मैं वाकिफ था। शायद शादी के बाद लड़कियों के स्वभाव में परिवर्तन हो जाता है।

मेरा मन अब शरारती हो रहा था। वह मेरे सामने हो और मैं शरारत नहीं करूँ यह हो नहीं सकता था। जीपवाले ने कुछ रेजगारी लौटाई थी। मैंने खोजकर उसमें से एक अठन्नी निकाली और बच्चे के हाथ में उसको दिखाकर दिया, 'लो बाबू! लेमनचूस खरीद लेना।' वह बिफरी नहीं। बच्चे के हाथ से अठन्नी लेकर फेका नहीं।.....क्या हो गया है उसको? वह उसी तरह शांत बैठी रही। अठन्नी ने उसके अंदर कोई हलचल नहीं मचाया। ताज्जुब है! इसी अठन्नी ने दस साल पहले एक कांड किया था। मेरा मन स्मृतियों में लौट रहा था।

उससे मेरी पहली मुलाकात....अब भी सोचता हूँ, तो मेरा मन अपनी उस हरकत पर शर्मिंदगी से भर जाता है। मगर ऐसी बातें बचपन में ही होती है, जब समझ शून्य पर होती हैं और बदमाशियाँ शिखर पर। क्या उम्र रही होगी मेरी? यही कोई आठ नौ साल की। न अभी शिराओं में खून गर्म हुआ था, न इंद्री में उतेजना। मगर स्त्री देह के गुप्त अंगों के प्रति एक लिजलिजा आकर्षण होना शुरू हो गया था। गर्मियों की छुट्टी में हम गाँव आये हुए थे। यह जैसे पापा का नियम था। स्कूल बंद। गाँव चलो। उनका मन गाँव में लगता था। मेरा नहीं। मैं तो गर्मी की दोपहर में आम के बगीचों में 'छिछियाता' फिरता था। गाँव के लफन्दर बच्चों से दोस्ती हो गयी थी। उनके बीच सबसे अमीर बच्चा मैं ही था। जेब में अठन्नी चवन्नी हमेशा हुआ करती थी। तब पाँच पैसे में गाँव की दुकान पर एक लेमनचूस मिलता था। मैं अपनी पैंट की जेब में लेमनचूस भर लेता और अपने लुहेड़े दोस्तों के साथ आम का

टिकोरा तोड़ता फिरता था।...ऐसी ही एक दोपहर में मैं अपने दोस्तों के साथ बांध पर घूम रहा था। यह लड़की पुलिया के नीचे बैठी घास गढ़ रही थी। मेरे दोस्तों ने मुझे चढ़ाया,' जो..जो.. अकेले बिया।'

एक ने कहा, 'पहले लेमनचूस दिखाना। नहीं माने तो पैसा देना।' मैं उनके चढ़ाने पर चढ़ गया। उनको बांध पर छोड़कर मैं पुलिया के नीचे उतर गया। उसके पास पहुँचकर मैंने पूरी हिम्मत बटोरकर कहा, 'ऐ!'...तर्जनी पर मध्यमा उंगली चढ़ाकर इशारा करते हुए मैंने कहा,..'दोगी?'

और लेमनचूस की कौन कहे सीधे अठन्नी ऑफर कर दिया। एक अठन्नी बराबर दस लेमनचूस। इससे ज़्यादा क्या चाहिए!...

उसने अपनी बड़ी-बड़ी आँखों से मुझे गुर्राकर देखा और गुस्से से भरी हुई उठ खड़ी हुई। मेरी खुली हथेली से अठन्नी उठाकर दूर हवा में फेंक दी। फिर उसने अपनी टोकरी और खुरपी उठाई और चल दी।

मैं उसके अनपेक्षित व्यवहार से स्तब्ध अपनी जगह पर जड़ हो गया।

जिस तरह मेरे दोस्तों ने मुझे समझाया था, मुझे तो यही लगा था कि बस बोलने भर की देर है। वह तैयार हो जाएगी।

मगर वह मुझे गालियाँ बकती हुई चली जा रही थी।

हवा में तैरती हुई उसकी आवाज़ आ रही थी, 'रे नतिया! अपना महतरिया से काहे ना मंगले ह रे ssss.....'

मुझे काटो तो खून नहीं।

शर्म और अपमान से भरा हुआ मैं सीधे घर लौटा। माँ सो रही थी। नहीं तो मेरा चेहरा देखकर समझ जाती कि मैं कोई कांड कर आया हूँ। जैसा वे मुझे हमेशा कहती हैं, 'तुम्हारा कोई ठीक नहीं है। कब कौन सा कांड कर बैठो।'

कांड तो हो चुका था। मैं बुरी तरह डरा हुआ था। मन ही मन गाँव की देवी माँ की गुहार लगा रहा था, अबकी बार बचा लो माँ! जीवन में ऐसी गलती फिर कभी नहीं करूँगा।

रक्षा करो माँ!

मेरी आँखों के सामने रह रह कर उस लड़की की छवि उभर रही थी। उसका क्रोध से तमतमाया हुआ चेहरा। कहीं अपने घर जाकर उसने यह बात बताई हो तो?...उसका बाप मेरे पापा से 'पुछ्वार' करने मेरे घर आ जाये तो?...मेरा मन आशंकाओं से भर उठा। पापा को यह बात मालूम हो जाएगी, तो मुझे काट कर रख देंगे।

डर से मेरा मन सिहर उठा।

पता नहीं किसकी बेटी है? कौन टोला घर है?

४

गाँवों में सुबह जल्दी होती है, किरण देर से फूटती है। सुबह होते ही माँ को चाय की तलब होती है। किरण फूटने तक सुखदेव दूध लेकर नहीं आया, तो वह बेचैन हो गई।

'जा तो बेटा! देखो तो सुखदेव अभी तक दूध लेकर क्यो नहीं आया।'

मैं जानता था चाय में अब और देर होगी, तो माँ सिर पकड़कर बैठ जाएगी। उसे सुबह की चाय नहीं मिलती है, तो उसका सिर दुखने लगता है और नतीजा मुझे भुगतना पड़ता है। बैठकर माँ का सिर टिपते रहो। मैं जल्दी से सुखदेव के घर भागा।

सुखदेव का घर दूसरे टोले में था। चौधरी लोगों का टोला। पूरा टोला गाय भैंसों से भरा हुआ। दुआर पर गोबर का ढेर और दीवाल पर गोबर के गोईठे। मैंने बाहर से आवाज़ लगाई, 'सुखदेव!'

एक लड़की गाय के नाद पर झुकी हुई नाद में भूसा डाल रही थी। उसने पलट कर मेरी ओर देखा। मेरा तो खून ही जम गया।..यह तो वही लड़की है! कलवाली।..मैं अब भागने ही वाला था कि उसने पूछा, 'दूध चाहीं का?'

मेरे हलक से फँसी हुई आवाज़ निकली, 'हाँ।'

कहानी- भारत से

'च ल। हम ले के आव तनी।'

लेकिन मैं गया नहीं। वहीं खड़ा रहा। वह अंदर गई। हाथ में दूध का लोटा लिए बाहर आई, 'च ल।' और मेरे साथ चल पड़ी।

मेरे मन में डर समाया हुआ था। मैंने डरते-डरते उससे कहा, 'कल वाली बात मेरी माँ से नहीं कहना।'

उसने घूर कर मुझे देखा, 'कौन बात?'

मैंने राहत की साँस ली, तो यह मुझे पहचानती नहीं है। लेकिन ऐसा नहीं था। वह मुझे ठीक से पहचानती थी। उसका बाप सुखदेव हमारे घर की सेवा में अपने बचपन से था। उसके पास अपनी कोई जमीन नहीं थी और हमारी ही जमीन की जोताई बोआई पर उसका परिवार आश्रित था। साल में हमलोग एक माह के लिए गाँव आते थे, तो वह दूध दही से हमारी सेवा करता। हालाँकि माँ यह सेवा मुफ्त में नहीं लेती। रुपयों-पैसों से उसकी मदद कर देती।

वह धीरे से बोली, ' गारीवाला बात चाची से मत बोलीह।'

चाची मतलब मेरी माँ।....तो वह भी डरी हुई है।

मैंने कहा, 'नहीं बोलूँगा। तुम भी अठन्नी वाली बात नहीं बोलना।'

हमारे बीच एक अलिखित करार हो गया।

हमारे सम्बन्धों की नींव एक अठन्नी पर रखी हुई है।

६

हम दूध लेकर पहुँचे, तो माँ ने उसे देखकर पूछा, 'यह कौन है? सुखदेव की बेटी! यह तो बड़ी हो गयी है।'

शायद माँ ने उसे और छोटे में देखा था। मैंने तो कल ही देखा था पहली बार।

'का नाम ह तोर?' माँ ने उससे नाम पूछा।

'रानी।'

मेरा शरारती मन व्यंग्य करने से नहीं चूका, 'कौन देश की रानी हो?'

उसने तमक कर कहा, 'तू कौन देश के राजा बा ड़?

माँ ठठाकर हँसी, 'अब दो जवाब!'

मैं क्या जवाब देता। मेरा तो मुँह ही बन गया था।

जवाब माँ ने ही दिया। कविता पढ़ने के अंदाज में।

'ई अपना घर के राजा। तू अपना घर के रानी। अब झाड़ू उठाई ए महारानी!'

एक दिन पहले सुखदेव ने माँ को झाड़ू लगाते देखकर कहा था, 'काल से रनिया के भेज देम मलकिनी! झाड़ू बर्तन कर दिहल करी।'

रानी ने झाड़ू उठा लिया।

रानी हमारे परिवार की अभिन्न सदस्य बन गयी। वह पूरे दिन हमारे घर रहती। केवल रात में अपने घर लौटती। उसका खाना-पीना माँ के साथ होता। माँ उसका ख्याल अपनी बेटी की तरह रखती। माँ के साथ-साथ वह लगी रहती। दिन में जब माँ खाली रहती, वह माँ के बालों से 'ढील' निकालती। उनके बालों में कंघी करती। उनका हाथ-पैर भी दबाती।

माँ को एक सहेली मिल गयी थी। दोनों पूरे दिन आपस में जाने क्या क्या बातें करती थीं। माँ भोजपुरी अच्छा बोलती हैं। मेरी ही परवरिश घर में हिंदी भाषा में की गई है। माँ-पापा मुझसे हिंदी में बातें करते। इसके पीछे उनकी यही सोच थी कि भोजपुरी बोलने से मेरी भाषा का संस्कार बिगड़ जाएगा। आज इस बात को लेकर मेरे मन में

काम्प्लेक्स रहता है। मैं भोजपुरी समझ लेता हूँ, बोल नहीं पाता हूँ। अपनी मातृभाषा से कटा हुआ आदमी उस कृत्रिम पौधे की तरह होता है, जो देखने में सुंदर तो लगता है, मगर उसमें जान नहीं होती।

रानी के आ जाने से एक परिवर्तन और मेरे अंदर आ गया था। आवारा दोस्तों का साथ छूट गया था। मैं पूरे दिन घर में ही रहता था। और किसी न किसी बहाने रानी को तंग करता रहता था। अपने हर काम के लिए उसे आवाज़ देता। बिना बात के भी उसे बुलाता। मगर रानी भी कम जिद्दी और अड़ियल नहीं थी। वह मेरी एक बात भी नहीं मानती। मैं उसपर जितना रोब दिखाता, वह उतनी ही मेरी अवज्ञा करती, जैसे मेरी कोई वैल्यू नहीं हो। दिन में दो चार बार हमारी लड़ाई हो ही जाती। और माँ उसे डाँटने के बजाय मुझे ही डाँटती, 'तुम क्यों रानी के पीछे पड़े रहते हो?' मैं उसकी शिकायत करता तो वह उसी की तरफदारी करती। मेरी समझ में नहीं आता कि वह मेरी माँ है कि रानी की माँ। माँ के इस व्यवहार से मैं और चिढ़ जाता।

एक बार वह सुखदेव के सामने मुझसे किसी बात पर लड़ रही थी। सुखदेव ने टोका, 'बाबुलोग से अइसे बोलल जाला?'

उसने तमककर जवाब दिया, 'तहार बाबुलोग होहीहें हमार ना।'

अब सोचता हूँ, तो मुझे लगता है उसके अंदर अठन्नी वाली बात को लेकर इतना गुस्सा था कि उस बात के लिए उसने कभी मुझे माफ नहीं किया। जब मैं हद से ज़्यादा तंग करता तो मुझे धमकी देती, 'अठन्नी वाला बात चाची के बता देम।'

मेरी सारी हेकड़ी निकल जाती।

६

उसके बाद तीन ही गर्मियों की छुट्टियों में हम गाँव गए। पापा की वकालत चल निकली थी और उन्हें कोर्ट कचहरी से फुर्सत नहीं मिलती थी। मैं भी ऊपर के क्लास में जाकर पढ़ाई के दबाव में आ गया था। स्कूल बंद रहता तो ट्यूशन शुरू हो जाता। हर साल हमारा गाँव जाने का सिलसिला टूट गया।

मैं भी इतना बड़ा हो गया था कि अकेले गाँव आ जा सकूँ। मैं गाँव जाने के लिए तैयार होता, तो माँ ज़रूर रानी के लिए कुछ न कुछ सौगात भेजती। चूड़ी, लहठी, तेल, साबुन, दैनिक उपयोग की बहुत सी चीज़ें और एक पैकेट बढ़िया से कपड़े का कवर चढ़ा कर ताकि मैं समझूँ नहीं कि उसमें क्या है। बड़ा होने के साथ स्त्रियों की कुछ खास ज़रूरतें मैं समझने लगा था, मगर माँ के सामने भोला बना रहता।..माँ सामान मेरे बैग में रखते हुए हिदायत देती, रानी के हाथ में देना। ज़रूर से। इस काम में मैं कभी नहीं ना नुकुर नहीं करता। इस बहाने रानी से मेरी मुलाकात हो जाती। सामान लेते हुए वह माँ का हाल बार-बार पूछती। 'चाची के देखला केतना दिन हो गइल।' मैं कहता, 'चाची को देखना है, तो छपरा चलो। कौन दूर है?'

वह अपनी मजबूरी बताती, 'लाला ले जई हन तब नु?'

मैंने एक बार कहा था, 'लाला के भरोसे क्यों हो? मेरे साथ चलो। पूरी जीप तय करके लौटता हूँ मैं। एक बोरा की जगह तुम्हीं को लाद लूँगा।'

वह चिढ़ कर बोली, 'हम बोरा हईं का? आ तहरा साथे त हम कब्बो ना जाएम।'

मेरा और उसका हमेशा छत्तीस का ही आँकड़ा रहा।

जब मेरी मैट्रिक की परीक्षा चल रही थी, तो उसकी शादी हो गयी। शादी तय होने की ख़बर लेकर सुखदेव छपरा आया था। माँ ने साड़ी, कपड़ा और जेवरात तो दिए ही, इतने रुपयों से मदद की थी कि पूरी शादी का खर्च निकल आता। मैंने माँ को ताना देते हुए कहा

था, 'लगता है तुम्हारी ही बेटी की शादी हो रही है।'
माँ मेरी बात पर भावुक हो उठी थीं, 'हाँ! मेरी ही बेटी है। इस जनम की नहीं पिछले जनम की।'
मैंने माँ की दुखती रग पर हाथ रख दिया था। एक बेटी की कमी हमेशा उसको सालती रहती है। उस दिन मेरी समझ में आया था कि उसका और रानी का रिश्ता भावनात्मक स्तर पर माँ बेटी का था, नौकर और मालिक का नहीं।

माँ ने उसकी शादी में रुपयों पैसों और सामान से जितना करना था, किया। मगर उसकी शादी में कोई नहीं गया। जाता कौन? मेरी परीक्षा चल रही थी। वह भी मैट्रिक की। जब मैं 'टेंथ' में था तब गर्मियों में गाँव आया था। वही उससे आखिरी मुलाकात थी। उसके बाद आज भेंट हो रही है। मैंने गौर से उसको देखा। बच्चा होने के बाद उसका शरीर भर गया है। साँवला रंग और निखर गया है। पीली साड़ी में वह और सुंदर दिख रही है। माँग के सिंदूर ने उसके चेहरे के लावण्य को और तीखा कर दिया है।....और आँखें?..मैंने गौर से उसकी आँखों को देखा।

७

उसकी आँखों के कोर भीगे हुए थे। वह साड़ी के छोर से अपनी आँखें पोछ रही थी। मैंने अपने पैर से उसका पैर दबाया। उसने मेरी तरफ नज़र उठाकर देखा।
'क्या बात है? घर पर सब ठीक है न?'
घर पर सब ठीक नहीं था। सुखदेव एक महीने से बीमार है। बुखार उतरने का नाम ही नहीं ले रहा है। 'मंगल बाबा कई बेर झाड़ चुकल बाड़े। कौनो फायदा नइखे।'
मैंने माथा ठोक लिया। ये गाँव के लोग कब झाड़-फूँक के चक्कर से मुक्त होंगे।
'माई ख़बर भेजले बिया। आ के लाला के देख ल। बुझाता अब तहार लाला ना बचिहें।'

ओह! यह ख़बर सुनते ही यह लड़की अकेले कोलकाता से दौड़ी आई है। पिता और पुत्री का अद्भुत प्रेम!

उस दिन गाँव पहुँचते-पहुँचते शाम ढल गयी थी। दूसरे दिन मैं पूरे दिन बटाईदारों से मिलकर अनाज का हिसाब लेता रहा। कुछ लोगों ने पैसे दिए, कुछ लोगों ने अनाज और कुछ लोगों ने हाथ जोड़ लिए। मैंने जितना अनाज मिला बोरियों में भरवा लिया और छपरा लौटने के लिए जीप तय कर ली। अगली सुबह मुझे छपरा लौट जाना था। मैंने तय किया कि सुबह लौटने में सुखदेव को देखते हुए छपरा लौट जाऊँगा।

सुबह जीप से मैं सुखदेव के घर पहुँचा, तो घर के अंदर से रोने की आवाज़ आ रही थी। आशंका से मेरा मन भर उठा।...सुखदेव गुजर गया क्या??..

घर के बाहर उस टोले के कुछ लोग खड़े थे। मुझे देखकर बोले, 'अभी जिअ तरे। जाइँ बाबू! मिल आईं।'

मैं घर में घुसा। गाँव में डॉक्टर कहे जाने वाले जमुना चाचा सुखदेव को देख रहे थे। मैंने चाचा से पूछा, 'क्या लग रहा है? बचेगा या नहीं?'

चाचा ने मेरी तरफ देखकर लंबी साँस लेते हुए कहा, 'बेटा! बच तो जाएगा पर गाँव में नहीं बचेगा। यहाँ इसका इलाज नहीं है।'

रानी दरवाज़े से सटे सुबुक रही थी। बच्चा डरा सहमा रानी के पास खड़ा था। रानी की माँ आँगन में बैठकर रो रही थी। यही आवाज़ मैंने बाहर सुनी थी।

मैंने जमुना चाचा से पूछा, 'छपरा ले जाया जाय तो?'

उन्होंने सिर हिलाते हुए कहा, 'छपरा में तो इसका इलाज सम्भव है। मगर अब देर नहीं होनी चाहिए।'

'हुआ क्या है?'

'कालाजार।' जमुना चाचा ने बताया।

कालाजार! मैं सन्न रह गया। और एक महीने से यहाँ झाड़-फूँक चल रहा है!!?..

मुझे पता नहीं मेरे अंदर कहाँ से त्वरित निर्णय करने की शक्ति आ गयी। सुखदेव मेरे लिए केवल आदमी-जन नहीं है। मेरे घर का सदस्य है। और सबसे बड़ी बात है कि वह रानी का बाप है। मैंने रानी से कहा, 'हम अभी छपरा चलेंगे।'

बाहर आकर मैंने जीप में जगह बनाई। अनाज की बोरियों को छत पर डालकर पीछे का हिस्सा खाली कर लिया गया। टोले के लोगों ने सुखदेव को जीप के पिछले हिस्से में लिटा दिया। रानी सुखदेव के पास बैठ गई। बच्चे को उसने समझा दिया, 'अस्पताल में बहुत दिक्कत होई बाबू! तू नानी के लगे रह जा।'..बच्चा रुआंसा तो था मगर तैयार हो गया। शायद वह सुखदेव के अस्थि पंजर हो चुके शरीर को देखकर डरा हुआ था। इसलिए नाना के पास बैठने के बजाय नानी के पास रहना उसे सुरक्षित लगा। मुझे भी रानी का यह निर्णय ठीक लगा। बच्चा साथ में रहेगा तो बाप की सेवा कैसे कर पायेगी?,...

८

जीप स्टार्ट हुआ तो बच्चा भरभरा कर रो पड़ा। रानी आँखें पोंछती हुई बच्चे को चिल्लाकर समझाती हुई चल पड़ी।

गाँव के बाहर जब हम छपरा जानेवाली रोड पर आए तो मैं प्रकृतस्थ हुआ। मेरे मन में अपने निर्णय की समीक्षा शुरू हो गयी। पता नहीं मेरे इस निर्णय से माँ खुश होगी या नाराज। मेरी आँखों के समक्ष उसका चेहरा उभर आया।...उसके अपने घर के लोग नहीं थे कि तुम लेकर चले आये?..एक बीमार आदमी के दवा दारू का खर्च कौन उठाएगा?...लेकिन अपनी माँ को जितना मैं जानता हूँ वह ऐसा कभी नहीं बोलेंगी। उनके उदार हृदय से मैं परिचित हूँ।

बचपन में जब हम नियमित रूप से गाँव आते थे, उनके पास पुराने कपड़ों की गठरी होती। मेरे कपड़े, पापा के कपड़े, अपनी साड़ियाँ। सब लाकर बाँट देती। रुपये पैसे भी मुक्त हस्त से देती। कोई भी ज़रूरतमंद उनके पास से खाली हाथ नहीं लौटता। छपरा में भी यही हाल है।

छपरा में हमारा पुश्तैनी मकान है। लंबे बरामदे वाला विशाल घर। गाँव के लोगों के लिए जैसे धर्मशाला हो। कोर्ट कचहरी के काम से लोग अक्सर छपरा आते। यदि रात में रुकना पड़ जाता तो सीधे हमारे घर चले आते। ठहरने खाने की मुफ्त व्यवस्था माँ की तरफ से हो जाती।

खाना बनाने के लिए एक बूढ़ी पंडिताइन हैं। वे बरामदे में जाकर 'मुड़ी' गिन आती।अंदर आकर माँ को बताती, 'बहुरानी! चार गो मुड़ी बा।' माँ चार आदमियों के लिए 'सीधा' निकाल कर पंडिताइन को दे देती।

एक बार मैंने माँ को इस बात के लिए टोक दिया था। वह दार्शनिक अंदाज में ऊपर की तरफ हाथ उठाकर बोली थीं, 'मैं कौन होती हूँ देनेवाली। देते तो भगवान हैं। वे दे रहे हैं, तभी तो मैं बाँट रही हूँ।' और मैं देख रहा हूँ, दस वर्षों में पापा की वकालत कहाँ से कहाँ पहुँच गई है। आठ-आठ तो उनके जूनियर हैं। केस मुकदमों का अंबार लगा रहता है। सुबह से शाम तक फुर्सत नहीं रहती है।

...मैं इन्हीं विचारों में खोया हुआ था कि पीछे से रानी बोली, 'सरकारी में ले चली ह।' मैं समझ गया वह पैसों को लेकर चिंता में है। मैंने उसे आश्वस्त किया, 'उसकी चिंता तुम मत करो। हमलोग हैं न वहाँ।

हमलोग वाकई वहाँ थे। जैसे ही मैं अपने घर पहुँचा। माँ बाहर निकल कर आई। सुखदेव को देखते ही 'धक' से रह गई।...केवल हड्डियों का ढाँचा।..'क्या हो गया है इसको?'

मैंने बताया, 'कालाजार।'

माँ करुण आँखों से सुखदेव को देखती रहीं। सुखदेव की आँखें कोटर में बैठे पंछी की तरह टुकुर-टुकुर माँ को देख रही थीं। शरीर में हिलने डुलने की ताकत नहीं थी। नहीं तो 'मलकिनी' को देखकर हाथ तो जोड़ता ही। माँ ने मेरी तरफ देखकर कहा, 'ठीक किया बेटा! जो यहाँ ले आये।'

पापा तो कचहरी जा चुके थे। माँ एक्शन में आ गईं। हमारे घर में स्थायी रूप से रहनेवाले नौकर बैजू को आवाज़ लगाई। जीप पर के बोरे भीतर रखवाये गए। फिर जीप की अगली सीट पर मेरे साथ बैठ गईं। हमारे घर के नजदीक ही एक नर्सिंग होम है- माँ अम्बे हॉस्पिटल। डॉक्टर साहब मेरे पापा के मित्र हैं। सुखदेव को उसी हॉस्पिटल में भर्ती कर दिया गया।

सुखदेव का इलाज शुरू हो गया।

९

माँ अम्बे हॉस्पिटल। छपरा का नामी प्राइवेट नर्सिंग होम। हमारे घर से पाँच सौ मीटर की दूरी पर। तीन साल पहले तक भूमि का एक बड़ा भूखण्ड था- विवादित। डॉक्टर साहब इसी विवाद को सुलटाने के लिए पापा के पास आये थे। पापा ने लग भीड़ कर दोनों पक्षों के बीच समझौता करा के विवाद का निपटारा करा दिया था। और डॉक्टर साहब ने ज़मीन की रजिस्ट्री करा ली थी। इसके बदले जब वे पापा को 'फीस' देने आए थे तो पापा ने हँसकर कहा था, 'डॉक्टर साहब आप नर्सिंग होम बनवाइये। भविष्य में बहुत मौके आएँगे मेरी फीस अदा करने के।'

देखते देखते तीन मंज़िला इमारत खड़ी हो गयी। नीचे ओपीडी, मेडिकल स्टोर, जाँच घर और

ओटी। फर्स्ट फ्लोर पर एक लंबे गलियारे के एक तरफ बड़ा सा हॉल और दूसरी तरफ कई कमरे। सबसे ऊपर डॉक्टर साहब का निवास।

शाम को जब पापा आए और उन्हें सुखदेव के बारे में मालूम हुआ तो, वे हॉस्पिटल चले गए। वकील साहब आये हैं यह सुनकर डॉक्टर साहब नीचे उतर आए। दिन में जब हम सुखदेव को लेकर आये थे तो, उन्हें लगा था कि वह हमारे गाँव का कोई व्यक्ति है। लेकिन जैसे ही उन्हें मालूम हुआ कि सुखदेव वकील साहब के घर के 'सवांग' जैसा है, उन्होंने तुरन्त स्पेशल व्यवस्था करवाई। सुखदेव को हॉल से निकाल कर नर्सिंग होम के सबसे अच्छे कमरे में शिफ्ट कर दिया गया। सबसे बड़ी बात यह थी कि सबकुछ मुफ्त था। केवल सुई दवाई का पे करना था। वकील साहब की फीस अदा हो गई।

हॉस्पिटल का वह कमरा क्या था जैसे किसी थ्री स्टार होटल का कमरा हो। फर्क केवल इतना था कि होटल के कमरे में चादरें सफेद होती हैं, यहाँ सब हरा हरा था। रानी इस कमरे में घुसते ही आतंकित हो गयी। दिन में वह हॉस्पिटल देखकर अचंभित थी। उसके मन में सरकारी अस्पताल की जो छवि थी, यहाँ ठीक उसके उलट था। फर्श दीवारें सब चकाचक। पूरे दिन झाड़ू पोछा होता रहता। सब कुछ उसके लिए चकित करने वाला था। अब तो एसी कमरा और अटैच बाथरूम। मैं उसे बाथरूम की व्यवस्था समझा रहा था। बाथरूम में कमोड लगा था। मैंने कहा, 'इसका ढक्कन उठाकर बैठना। ढक्कन पर मत बैठ जाना।'

मेरी इस बात पर वह अचानक गुस्से में बोली, 'आमी जानी। आमादेर बाड़ी ते कमोड आचे।'

मैं अवाक उसका मुँह देखता रह गया। यह बांग्ला बोलना कब सीख गई!

मैंने हँसते हुए कहा, 'ओ! अब तुमी बिहारी बोका नाय। बंगाली बोका?'

मेरी इस बात पर वह मुझे मारने नहीं दौड़ी। केवल एक फीकी हँसी हँस कर रह गई।

बाद में मुझे माँ से पता चला। रानी की शादी सम्पन्न घर में हुई है। कोलकाता में उनका कपड़े का व्यवसाय है। रानी के पति की यह दूसरी शादी है। पहली पत्नी मर चुकी है और उससे कोई संतान नहीं है। दोनों के बीच उम्र का बड़ा अंतर है। हमारे गाँव के बगल के गाँव के ही हैं वे लोग, मगर कई पीढ़ियों से कोलकाता में रहते हैं। अपना घर है वहाँ। उन्हीं लोगों ने सुखदेव को अप्रोच किया था शादी के लिए। तभी सुखदेव दौड़ा-दौड़ा माँ के पास आया था। 'मलकिनी! लड़की के भाग! हमरा खोजला से अइसन बड़का घर ना मिली। रउआ तनी मदद कर देतीं।' और माँ ने तनी नहीं पूरी मदद की थी।

कोलकाता जाकर वह बांग्ला बोलना सीख गई थी।

कोलकाता के उसके घर में एसी था, कमोड था। और मैं उसे कमोड पर बैठना सिखा रहा था।

१०

बेड पर सुखदेव लेटा हुआ था और उसे पानी चढ़ रहा था। बीच बीच में हॉस्पिटल के स्टाफ आकर पानी देख जाते और रानी से कह जाते कि पानी खत्म होने पर आए तो घण्टी बजा देना। वह कितना समझ रही थी कितना नहीं मगर हर बात पर सिर हिला दे रही थी। 'ठीक बा।'

मैंने उसे टोकते हुए कहा, 'समझ में भी आ रहा है कि बिना समझे सब ठीक बा?'

इतने दिन बाद वह अपने तेवर में लौटी, 'सब तहरे बुझाला? बहुत होशियार भइल बा ड़?'

'तुम कितनी होशियार हो मैं जानता हूँ। झाड़-फूँक करवा रही थी न अबतक?'

इस बार वह बर्स्ट कर गई, ' हम करवावत रनी ह कि माई करवावत रहे? हम अइनी त जमुना चाचा के बुलवनी।'

उसका कहना सही था। मैं कुछ नहीं बोला। लेकिन उसका पुराना तेवर देखकर मैं मन ही मन खुश हो रहा था। इसी रानी की तो मुझे तलाश थी।
रात थोड़ी गहरा गई तो वह बोली, 'अब तू जा। पानी त रात भर चढ़ी। कब तक बइठ ब?'
मैं घर जाने के लिए उठ खड़ा हुआ। दरवाज़े को खोलते हुए मैंने पूछा, 'रात में अकेले रहने में डर तो नहीं लगेगा?'
उसने घूर कर मुझे देखा, 'तू रह ब त लागी। तू चल जइब त ना लागी।'
क्यो? मैं कोई शेर बाघ हूँ क्या जो तुमको खा जाऊँगा?'
'ओहू से खतरनाक।' कहकर उसने मुझे दरवाज़े से बाहर ठेल दिया।
उस रात सिटी बजाते हुए मैं घर में घुसा तो माँ ने चौंक कर मुझे देखा। 'बहुत खुश हो?'
मैं उसको क्या बताता! मुझे तो खोई हुई रानी मिल गयी थी।

मेरा बीए का एग्ज़ाम हो चुका था और रिजल्ट निकलने तक मैं पूरी तरह फ्री था। उसके बाद लॉ की पढ़ाई करनी थी और डिग्री मिलते ही पापा के साथ कोर्ट ज्वाइन करना था। तब कहीं शहर में बाबू राघवेन्द्र प्रताप नारायण सिंह को कोई जाननेवाला होगा। फिलहाल तो आरपीएन सिंह उर्फ राजा का पूरा समय हॉस्पिटल में रानी के साथ गुजर रहा है। मैं सुबह नाश्ता करके हॉस्पिटल आ जाता। माँ रानी के लिए नाश्ता दे देती। रानी दिन में मेरे घर चली जाती और वही से नहा खाकर हॉस्पिटल लौटती।

गाँव से निकलते समय रानी जैसी थी वैसी ही चली आई थी। जो साड़ी देह पर थी वही एक साड़ी उसके पास थी। मगर माँ के रहते हुए मुझे माँ की सिर चढ़ी बेटी के लिए क्या सोचना था!
इसी बात के लिए मेरी माँ से एक बार लड़ाई हो गई थी।मैंने चीखते हुए कहा था, 'तुमने उसको सिर पर चढ़ा रखा है।'
माँ भी गुस्से से भरी हुई बोली थी, ‘वह सिर पर चढ़ाने लायक है तभी सिर पर चढ़ा रखा है।

हमारी 'जात' की होती तो अपनी बहू बनाकर रखती।'
मैं अवाक माँ का मुँह देखता रह गया था। यह क्या बोल रही है माँ!
अब तो इस बात की कोई संभावना नहीं है। अब तो मेरे मन में एक ही इच्छा है कि उसके मन में बसी हुई मेरी गंदी छवि किसी तरह मिट जाए।

वह रोज नहाने जाती और उधर से माँ की साड़ी पहनकर लौटती। कमरे में अकेले बैठा मैं पानी देख रहा होता। वह घुसती तो मैं चौंक जाता। लगता माँ चली आ रही है।

११

अगले तीन दिन बहुत क्रूशियल थे। पानी की बोतल में दवा डालकर लगातार चढ़ाया जा रहा था। बार-बार ब्लड टेस्ट होता। इस बीच कई दूसरे डॉक्टरों ने भी विजिट किया। डॉक्टर साहब खुद सुबह शाम आते। रिपोर्ट देखते। सुखदेव की आँखें देखते। उसकी नब्ज टटोलते। आला लगाकर छाती की धड़कन सुनते। चौथे दिन उन्हें लगा कि सुधार हो रहा है तो उन्होंने रानी को ढाढ़स बंधाया, 'अब डरने की बात नहीं है। लेकिन अभी कुछ दिन और हॉस्पिटल में रखना पड़ेगा, जब तक खतरा पूरी तरह टल नहीं जाता।'
रानी उदास आँखों से अपने पिता को देखती। मुझे उसकी उदासी अच्छी नहीं लगती। मैं उसे खुश रखने की हर कोशिश करता, मगर वह रह रह कर उदास हो जाती।

पाँचवें दिन दोपहर में मैं हॉस्पिटल के कमरे में घुसा तो रानी अपने बेड पर बैठी सुबुक रही थी। सुखदेव दवा के प्रभाव में गहरी नींद में था। पानी की बोतल अभी अभी बदल कर स्टाफ गया था। मुझे लगा उस स्टाफ ने ऐसा कुछ कहा है, जिसे सुनकर रानी रो रही है।
'क्या हुआ है? कोई कुछ बोला है क्या?'
'बाबूऊऊऊ......'कहकर वह फूट पड़ी।

ओह! तो वह अपने बेटे को याद कर रो रही है। मैंने उसको समझाने के लिए कहा, 'अरी पगली! वह नानी के पास मस्ती में होगा। तुमको याद भी नहीं करता होगा। तुम बैठी रो रही हो। गाँव जाओगी तो तुमको पहचानेगा भी नहीं। कौन मम्मी? कैसी मम्मी?'

मेरी बात पर हँसने या चुप होने के बजाय और हिलक हिलक कर रोने लगी। मैं उसके सामने खड़ा हो गया और उसके सिर को अपनी छाती से सटा लिया। और उसकी पीठ सहलाने लगा, 'चुप हो जाओ। और दो दिन की बात है। डॉक्टर साहब कह रहे थे, दो दिन बाद सुखदेव को गाँव ले जा सकते हैं।'

मेरी सांत्वना कोई काम नहीं आई। उसने अपनी बाहों में मेरी कमर को लपेट लिया और मुझसे चिपक गई। उसकी रुलाई और तेज हो गई।

समय आकर वही खड़ा हो गया। मैं उसकी पीठ सहलाता रहा। वह मुझसे चिपकी रोती रही। जी भरकर रो लेने के बाद उसका जी हल्का हुआ। उसके बाहों की पकड़ ढीली हुई, तो समय को जैसे चेत हुआ।

मुझे छोड़कर वह उठी। बाथरूम में जाकर मुँह धोया। वापस आकर अपने बेड पर बैठ गई। मैं चुपचाप अपनी कुर्सी पर बैठा हुआ था। मेरे भीतर मंद मंद स्वर में कोई रागिनी बज रही थी, जिसकी धुन मुझे बहुत प्यारी लग रही थी। कोई कुछ नहीं बोल रहा था। कमरे में एक खामोशी थी। उस खामोशी में एक संगीत बज रहा था। दुनिया के हर संगीत से जुदा और अलहदा। जिसे मेरा दिल सुन रहा था। जिस पर मेरा मन नृत्य कर रहा था। जिस की धुन पर एक गीत बज रहा था।....कुछ ना कहो... कुछ भी ना कहो... क्या कहना है...क्या सुनना है....मुझको पता है....तुमको पता है....समय का ये पल....थम सा गया है....और इस एक पल में...बस एक मैं हूँ... बस एक तुम हो...

कहानी- भारत से

कमरे का दरवाजा खुला। एक स्टाफ घुसा।

'अरे! पानी खत्म होने पर है और आप लोग चुपचाप बैठे हुए हैं।'

मैं जैसे होश में आया। वह बोतल बदलने लगा।

मैं उठकर घर आ गया।

अपने बिस्तर पर लेटा जाने किन ख्यालों में गुम था। कब शाम ढली। कब अंधेरा हो गया मुझे नहीं पता।

कमरे की बत्ती जलाने माँ कमरे में घुसी तो मुझे बिस्तर पर लेटा हुआ देखकर चौंक गई।

'क्या हुआ है तुमको? तबियत तो ठीक है न?'

हाँ माँ! तबियत बिल्कुल ठीक है।'

मैंने उठकर माँ को अपनी बाहों में भर लिया और उसके कंधे पर सिर रख दिया।

माँ हँसी। 'आज माँ पर बहुत प्यार आ रहा है? कुछ चाहिए क्या?'

'तुम ऐसा क्यों बोलती हो माँ? क्या मैं ऐसे प्यार नहीं करता हूँ?'

'करते हो बेटा!...मगर इतना नहीं करते जितना आज कर रहे हो।'

माँ के होठों पर एक हँसी दबी हुई थी।

फिर अचानक बोलीं, 'आज दिन में रानी खाने नहीं आई? और तुम भी सुबह के खाये हुए हो? क्या बात है दोनों को भूख नहीं लग रही है?'

मैंने हँसते हुए कहा, 'ऐसी कोई बात नहीं है माँ! मुझे तो बहुत भूख लगी है। और रही बात रानी की, तो रानी अपने बेटे को याद करके बहुत रो रही थी।'

माँ रानी के बारे में सुनकर उदास हो गई। एक माँ का दर्द दूसरी माँ ही समझ सकती थी।

एक निःश्वास के साथ बोलीं, 'अच्छा! अब एक दिन की बात और है। डॉक्टर साहब तुम्हारे पापा से कह रहे थे, परसो डिस्चार्ज कर देंगे।'

सुखदेव के डिस्चार्ज होने की बात सुनकर मुझे खुशी नहीं हुई। परसो रानी चली जायेगी इस

ख्याल ने मुझे उदास कर दिया।

'तुमने तो उसके बेटे को देखा है? कितना बड़ा है?' माँ रानी के बेटे के बारे में पूछ रही थी। मेरी आँखों के सामने उसके बेटे का चेहरा तैर गया।

'तीन साल का होगा माँ!'

जब मैं मैट्रिक की परीक्षा दे रहा था, तभी रानी की शादी हुई थी। मुझे मैट्रिक पास किये हुए आज चार साल हो गए। मैं मन ही मन हिसाब जोड़ रहा था। शादी के एक साल बाद बच्चा हुआ होगा। मैं माँ को उत्साहित होकर बता रहा था, 'बहुत प्यारा बच्चा है माँ! एकदम रानी पर गया है। गोलमटोल और बड़ी बड़ी आँखें। और जानती हो रानी ने उसका नाम क्या रखा है?

'क्या?'

'राजा।' मुझे लगा माँ यह सुनकर नाराज होगी कि उसे नाम रखने के लिए मेरे ही बेटे का नाम मिला था। मगर वह हँसकर बोली, 'अमीर हो या गरीब सबका बेटा राजा ही होता है।'

मैं आवाक माँ का मुँह देखता रह गया। कितनी बड़ी बात बोल गई माँ। मैं फिर उसके गले लगता हुआ बोला, 'यू आर ग्रेट माँ!'

माँ मुझे अपने देह से हटाती हुई बोली, 'अच्छा माँ की चापलूसी छोड़ो। खाना खा लो और रानी के लिए खाना लेते जाओ। अब उसको भूख लग गई होगी।'

१३

कहानी- भारत से

सच में रानी को तेज भूख लगी थी। मैं खाना लेकर पहुँचा तो उसने मेरे जाने का इंतजार नहीं किया। टिफिन खोलकर खाने बैठ गई। और दिन तो टिफिन रख लेती थी और मैं खाने के लिए कहता तो जवाब देती, 'अभी भूख नइखे। हम रात में खा लेम।' रात में मतलब मेरे जाने के बाद। मेरे सामने खाने में उसे पता नहीं क्या परेशानी थी। मगर आज हबर हबर खाये जा रही थी। अचानक उसने सिर उठाकर मुझे देखा। मैं एकटक उसको देखे जा रहा था।

'अइसे का दे ख त र? आदमी के खात नइखे देखले का?'

'देखा है।' मैंने हँसकर कहा, 'मगर आदमी को कुकुर की तरह खाते नहीं देखा है।'

वह एकदम से मुझे मारने दौड़ी। मैं भाग खड़ा हुआ।

उस रात मुझे देरतक नींद नहीं आई। छत पर लेटा तारों को देखता हुआ जाने किन ख्यालों में खोया हुआ था। एक गीत मन के ग्रामोफोन पर बज रहा था।

जब मैं रातों में तारे गिनता हूँ....और तेरे कदमों की आहट सुनता हूँ....लगे मुझे हर तारा तेरा दर्पण....आये तुम याद मुझे....गाने लगी हर धड़कन...खुशबू लाई पवन......महका चंदन....

अगले दिन माँ सुबह में ही बाज़ार गई और रानी के लिए साड़ी, उसके बच्चे के लिए ड्रेस, और भी-औरतों के शृंगार-पटार की चीज़ें ले आई। दिन में रानी घर आई तो आँगन में जैसे बेटी विदाई का दृश्य उपस्थित हो गया। वह माँ से लिपटकर फूट फूट कर रो रही थी। माँ समझा रही थी, 'अब क्यों रो रही हो? अब तो तुम्हारा बाप ठीक हो गया। तुम्हारे जैसी बहादुर बेटी जिस बाप के पास हो वह कैसे मर सकता है?'

'हम का कइले बानी चाची!' रानी कह रही थी, 'सब त रउआ लोग कइले बानी। रउआ ना रहती त लाला ना बचते।'

माँ यह मानने को तैयार नहीं थी, 'हमलोगों ने क्या किया है? यह तो तुम थी जो बाप

की बीमारी की ख़बर सुनकर कलकते से दौड़ी चली आई।'

रानी ने प्रतिवाद में कहा, 'हम आइए के का कर लेती चाची! अगर राजा ना आइल रहते।'

यह पहली बार था कि उसने किसी बात के लिए मेरा अहसान माना था।

माँ समझा रही थी, 'करते भगवान हैं। आदमी तो केवल माध्यम बनता है। यह संयोग किसने रचा कि तुम उधर से पहुँची, इधर से राजा पहुँच गया। इसलिए भगवान को धन्यवाद दो बेटा! वही करनेवाले हैं। आदमी की क्या औकात है।'

कहने को तो मेरी माँ केवल सातवीं पास है। पर पता नहीं इतनी ज्ञान की बातें कैसे जानती है। शायद खाली समय में गीता, रामायण, भागवत पढ़ती रहती है वहीं से यह ज्ञान मिलता हो।

उस दिन मेरे घर से लौटती हुई वह बरसाती नदी की तरह उमड़ी हुई थी। रह रह कर अपनी आँखें पोंछती थी। मेरा भी मन भरा हुआ था। पूरे रास्ते हम चुप रहे। कमरे में आकर भी हम चुप बैठे हुए थे।

आज सुबह सुखदेव को हॉस्पिटल में मरीजों के लिए बननेवाली खिचड़ी खिलाई गई थी। यह उसमें सुधार का बहुत बड़ा लक्षण था। पानी चढ़ना अब बंद हो गया था। दवाएँ उसने मुँह से खा ली थी। दोपहर में जब वह दवा के प्रभाव में सो रहा था, तो मैं भी रानी के साथ घर चला गया था। दो दिनों से मेरे मन की स्थिति विचित्र हो गई है। सोते जागते रानी का ख्याल बना हुआ है और मैं हर पल रानी के साथ होना चाहता हूँ। हम लौटकर आये तो सुखदेव उसी तरह नींद में था। हम चुप बैठे हुए थे कि अचानक रानी ने पूछा, 'तू हमरा बिआह में काहे ना अई ल?

मैं पहले भी बता चुका था, फिर से बताया, 'मेरी परीक्षा चल रही थी। मैं कैसे आता?'

'हम तहार बहुत इंतजार कइनी।'

उसकी नज़र में मैं एक नम्बर का दुष्ट और 'झगड़ाह' था।

फिर मेरा इंतज़ार क्यों कर रही थी? मैंने पूछा, 'क्यों? लड़ने के लिए?'

'हाँ। लड़े खातिर।' कहकर उसने एक जोर का घूसा मेरी बाँह पर जड़ दिया।

पहलेवाली बात होती तो मैं एक के बदले चार घूसा लगाता। मगर आज उसका मारना मुझे अच्छा लगा। मैं चाह रहा था कि वह मुझसे लड़े, झगड़े, मुझे मारे। मैं भी उसके गालों पर चटाचट थप्पड़ लगाऊँ। और जब वह रोने लगे तो उसको अपने सीने में भींच लूँ। जैसे एक माँ अपने बच्चे को भींच लेती है।

मुझे मारने के बाद वह मुझे अजीब शोख नजरों से देख रही थी। मेरे मन में एक गीत बज उठा।

शोखियों में घोला जाय...फूलों का शबाब....उसमें फिर मिलाई जाय....थोड़ी सी शराब...होगा यूँ नशा जो तैयार.... वो प्यार है...

तो क्या वह मुझसे प्यार करने लगी है?????

१४

आज उम्मीद थी कि सुखदेव को डिस्चार्ज कर दिया जाएगा। माँ भी मेरे साथ नर्सिंग होम आई हुई थी।

डॉक्टर साहब ने सुखदेव को देखने के बाद कह दिया कि अब घर ले जा सकते हैं। हॉस्पिटल में रखने की ज़रूरत नहीं है। कुछ दवाएँ उन्होंने लिख दी। 'बस यही खिलाओ और सेवा करो। अब घबड़ाने की बात नहीं है। घर पर रखो।'

माँ रानी से बोली, 'समझ गई न? दवा खिलाना है और सेवा करना है। तोर लाला अब ठीक बाड़े।'

फिर मुझसे बोली, 'एक जीप तय कर दो। आज ही चली जाए।'

संयोग से मुझे वही जीपवाला मिल गया, जो हमें लेकर आया था। उसे कुछ बताना नहीं था।

आज सुखदेव के देह में इतनी जान थी कि वह अपनी 'मलकिनी' को हाथ जोड़ सके। स्ट्रेचर पर डालकर जब उसे जीप में बैठाने ले जाया जा रहा था, तो वह माँ की कौन कहे हॉस्पिटल के एक-एक स्टाफ को हाथ जोड़ रहा था। उसकी आँखों की कोर से आँसू बह रहे थे। प्रकृति ने हर व्यक्ति को अपनी भावनाओं को व्यक्त करने के लिए देह की भाषा दी है। आज सुखदेव के रोम रोम से कृतज्ञता टपक रही थी।

रानी ने आज माँ की दी हुई नई साड़ी पहन रखी थी। सिल्क की लाल पाढ़ की पीली साड़ी में उसका साँवला रूप रंग और निखर आया था। आज पूरी बंगालन लग रही थी। मेरी नज़र बार-बार उसकी तरफ उठ जा रही थी। आज वह बहुत खुश थी। खुशी के तीन तीन कारण थे। पिता का ठीक होना, गाँव लौटना और सबसे बड़ी बात आज पूरे एक हफ़्ते बाद बेटे से मिलने का सुयोग होना।

सड़क पर जीप खड़ी थी।

जीप के पिछले हिस्से में सुखदेव को उसी तरह लिटा दिया गया था जैसे हम गाँव से लाने में लाये थे। अभी वह बैठकर जाने की स्थिति में नहीं था। मैं जीपवाले को समझा रहा था, 'गढ़की बचा कर ले जाना। जैसे उस दिन लाए थे।' वह मुझे आश्वस्त कर रहा था, 'भैयाजी! आप निश्चिंत रहिये। कौनो दिक्कत नहीं होने देंगे।'

माँ हॉस्पिटल की सीढ़ियों पर खड़ी थी।

रानी माँ से मिलकर जीप के पास आई। जीप में बैठने से पहले उसने कहा, गाँवे अई हा।'

मैंने आश्वस्त किया। 'जल्दी ही आऊँगा।'

फिर कहा, 'तुम्हें किसी चीज़ की ज़रूरत पड़े तो खबर करना। गाँव से हर रोज कोई न कोई आता ही है।'

वह जीप में बैठ गई। आज वह जीप की अगली सीट पर बैठी थी।

मैंने फिर पूछा, 'अभी किसी चीज़ की ज़रूरत हो तो बोलो।'

उसने उन्हीं शोख नज़रों से मुझे देखा, जैसे कल देख रही थी। धीरे से बोली, 'एगो चीज़ चाहीं।'

मैं उत्सुक हुआ।' बोलो। क्या चाहिए?'

क्या चाहिए का उत्तर देने से पहले उसने जीपवाले को कहा, 'च ल भैया!'

जीपवाला तो तैयार बैठा था। जीप स्टार्ट हो गई।

मैं उत्तर की उम्मीद में उसको देख रहा था।

उसने फुसफुसाती आवाज़ में जो कहा, उसे सुनकर मैं एकबारगी चौंक गया। मुझे अपने कानों पर विश्वास नहीं हुआ। जीप आगे बढ़ रही थी और मैं तेज कदमों से चलते हुए पूछ रहा था, 'क्या?... क्या?.......क्या चाहिए तुमको??...क्या बोली हो???....

वह फिर, नहीं से नहीं बोली। उसने अपना चेहरा साड़ी से ढँक लिया था।

जीप मुझे पीछे छोड़ती हुई आगे बढ़ गई।

मैं सड़क पर स्तब्ध खड़ा था।

मुख्य सड़क पर पहुँचकर जीप गाँव की तरफ मुड़ी, तो उसने पलटकर मेरी तरफ देखा। फिर नज़रों से ओझल हो गई।

उसके आखिरी शब्द मेरे दिल में घण्टियों की तरह बज रहे थे।

मैंने पूछा था, 'क्या चाहिये?'

उसने कहा था, 'अठन्नी'।

****

सफरनामा

हम सब कभी-न-कभी किसी-न-किसी वजह से ट्रेन में सफर करते हैं। इस कविता के द्वारा मैं ट्रेन सफर के कुछ ऐसे पहलुओं पर आपका ध्यान खींचना चाहती हूँ, जो अनकहे और अनसुने से रह जाते हैं। इस कविता से मैंने यह दर्शाने का भी प्रयास किया है कि हम किस तरह से एक ट्रेन से जीवन जीने की प्रेरणा ले सकते हैं।

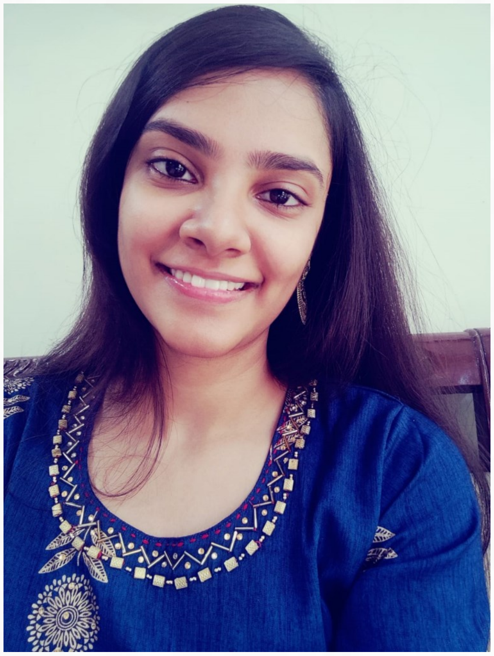

स्पंदन गर्ग
छात्रा-एम.बी.ए नरसी मोंजी इंस्टिट्यूट ऑफ मैनेजमेंट स्टडीज,
मुंबई, भारत

यूँ ही चलते-चलते मुसाफिरों को उनकी मंज़िल
तक ले जाती हूँ,
रोज़ आगे बढ़कर भी खुद वैसी की वैसी रह
जाती हूँ।
यूँ ही चलते-चलते, यादों का एक पिटारा बुन
लेती हूँ,
और यूँ ही चलते-चलते रोज़ एक नई मंज़िल
चुन लेती हूँ।
बस यूँ ही चलते-चलते कभी कुछ ज़िन्दादिलों
को सफर का आनंद लेते देखती हूँ,
कुछ साथियों को कान में ईयरफोन्स लगाए
अपनी मन-पसंद धुन सुनते देखती हूँ,

लेकिन, इसी सफर में, उस बूढ़े को अपने चने बेचने की खातिर धक्के खाते भी देखती हूँ,

हाँ, इसी सफर में किसी अनाथ भिखारी को अपने हाथ फैलाते भी देखती हूँ,

इसी सफर में अपने वारिस को होस्टल छोड़ने आए पिता की आँखों में आँसू भी देखती हूँ।

यूँ ही चलते-चलते इन सबको इनकी मंज़िल तक सही-सलामत पहुँचाने में ही मेरी खुशी का वास है,

यूँ ही चलते-चलते, नए-नए लोगों से मुलाकात होती रहे, ज़िन्दगी से बस यही आस है।

एक बात और साझा कर लूँ तुमसे, कभी-कभी यूँ चलते-चलते, मेरा दिल टूट जाता है,

ऐसा तब होता है जब ज़िन्दगी की दौड़ में पराजित हुआ आदमी मेरे आगे आकर कूद जाता है।

सोचती रह जाती हूँ , कि क्या खता हुई होगी, इस कदर दुनिया छोड़ने के पीछे क्या वजह हुई होगी?

तब फिर से मैं सोचती हूँ, मैं भी तो रोज़ आगे बढ़ती रहती हूँ,

उन्हीं जंगलों के बीच कभी बारिश की तलवार तो कभी धूप की उत्तेजना सहती रहती हूँ,

फिर भी यूँ ही चलते-चलते मैं रोज़ प्रयास करती रहती हूँ।

****

भगीरथ

"बाढ़ के कारण जल स्तर इसी प्रकार बढ़ता रहा तो हमारी कॉलोनी पर भी जलमग्न होने का खतरा मंडराने लगेगा", विभा ने व्यथित स्वर में कहा।

"सच है। ऊँची जगहों पर बनी हुई कुछ आवासीय कॉलोनियों को छोड़कर पूरा शहर, पूरा जिला ही जलमग्न हो गया है", नितिन ने चिंतित स्वर में कहा।

"नदी किनारे बना घर मुझे बहुत भाता था पर बाढ़ की विभीषिका से दिल दहलाने वाले दृश्यों ने साँस लेना दूभर कर दिया है। यहाँ रहने में भी डर लग रहा है, कितनी जानें जा चुकी हैं और निरंतर बहती इंसान और जानवरों के शवों की दुर्गंध में कैसे जिएँ हम?"

"खुशनसीब हैं हम कि घर में पानी नहीं घुसा, वरना कितने ही घर बह गए। ऐसा ख़ौफ़नाक दृश्य, जीवित-मृत, इंसान-पशु, जलकुंभियाँ और टूटी झोपड़ियाँ, सब जलधारा के संग बहे जा रहे हैं।

"नितिन वहाँ देखो, महिला के बहते शव पर

नीना सिन्हा
लेखिका
पटना. भारत

रोता हुआ शिशु! शिशु को पेट पर बिठाकर साड़ी से बाँध रखा है, शायद अंतिम इच्छा होगी, 'मैं रहूँ ना रहूँ, बच्चा बच जाए।' मातृत्व ऐसा ही होता है।"

तीव्र जलधार में एक और दृश्य समक्ष आया। एक युवक ने केले के कुछ तनों को बाँधकर नाव बनाकर उसपर अनाज का ढीह बनाया था, पानी का डब्बा भी लदा था। बैठने की जगह न बची थी, वह केले की नाव पकड़े और दूसरे हाथ में लाठी थामे, बहता चला जा रहा था।

"इसे क्या कहें, पितृत्व की भावना? युवक को देख यूँ प्रतीत नहीं होता कि पहले परिवार और बच्चों को सुरक्षित स्थान पर भेजा होगा। फिर कुछ अनाज बचाने की जद्दोजहद में जलस्तर बढ़ गया हो, प्राण संकट में आ गए हों, अब उम्मीद की डोर पकड़े किसी चमत्कार की आशा में जीवन को खींच रहा है।"

"क्या कहें नितिन! प्रकृति की विभीषिका के सम्मुख, मानव, पशु सब बेबस हैं, ईश्वर ही कुछ करें। कई दिनों से होती अतिवृष्टि को रोकें", दो मोटे-मोटे आँसू विभा के नैनों से ढुलके। खिड़की बंद कर वह निढाल हो गई।

****

स्नेह- लगाव

श्यामल बिहारी महतो
तारमी कोलियरी सीसीएल कार्मिक विभाग में वरीय लिपिक व लेखक
बोकारो, झारखंड
भारत

सुबह का समय था । बाहर से मेरे कुछ दोस्त आये हुए थे । कुछ खाने पीने के बाद हम साथ बैठे चाय पी रहे थे । तभी हमने देखा दुखना घर आ गया है । वहीं से मैंने उसे आवाज़ दी-" अरे दुखना ! "

तब वह पानी पी रहा था ।

" आप अरे कह कर बुलाते हैं उसे बुरा नहीं लगता है ?"

एक दोस्त ने एतराज जताया।

" उसके जन्म के तीसरे दिन से ही हम सभी उसे इसी नाम से पुकारते-बुलाते हैं । कभी उसने बुरा नहीं माना ।

" तो क्या जन्म के बाद ही आपने उसका यह नामकरण कर दिया था ?"

" हाँ,उसके जन्म के तीसरे दिन ही यह नाम रखा गया था । तब से वह इसी नाम से जाना जाता है !"

" कहाँगया-आया नहीं ...?"

" आ जायेगा अभी वह कुछ खा रहा है !"

कहानी- भारत से

" अपने बेटे का इस तरह का नाम सुनकर उसकी माँ को बुरा नहीं लगता, वो आपत्ति नहीं करती है ?

" अब वह इस दुनिया में नहीं रही !"

" ओह- सॉ-सॉरी ! हमें मालूम नहीं था "दूसरे ने अफसोस जाहिर किया था ।

" कायल रथलाल घार छठियारी लागो ! " गाँव की ठकुराइन दीदी सहसा आंगन में टपक पड़ी

" अबकी क्या हुआ दीदी ..?" मैंने जानना चाहा ।

" आर कि हतअ ! फेर बेटिये भेलअ तो !" लगा बेटी होने से ठकुराइन दीदी भी खुश नहीं थी।

“ चार तो हो गई । लगता है हमारी भौजी, आधा दर्जन तक देखने के बाद ही बंद करने की सोचेगी । तुम लोग उसे कुछ समझाती नहीं । बेटियाँ आज बेटों से पीछे नहीं हैं -बहुत आगे बढ़ रही हैं !

" हमनी कि कहबअ बाबा ! ओकरा नाय पिराय है तो हमरा कि जाय...!" मुँह में आंचरा ठूँस वह हँसते बाहर निकल गई ।

उसके जाते रविदास टोला का रति रविदास पहुँच गया । प्रणाम कर बगल कोने में खड़ा हो गया ।

" क्या बात है ? सुबह सुबह...!"

" फिर दोनों बचवन के स्कूल में नाम कयट गेलअ...!"

" काहे कटा...? पिछली बार हमने कहा था न कि समय पर महीना पैसा जमा कर देना। .! फिर...?"

" कुआँ में काम करल हलिये -तीन महीना से पैसे नाय देल है कि करबअ ...!"

" कितना लगेगा ...?"

" दोनों के सतरह सौ...!"

" आगे से कटना नाय चाही फिर हमरे पास मत आना- लो जाओ..!"

पाँव छू प्रणाम कर रति चला गया । यह देख एक दोस्त का माथा चकरा गया । बोला -" इन लोगों का भी आपके पास आना होता है .?"

" इन लोगों से क्या मतलब है आपका ? अरे ये भी इंसान हैं । इन्हें भी समाज में पूरा पूरा जीने का हक है!"

" फिर भी ऐसे लोगों को अपने से दूर ही रखना चाहिए...!"

" मैं जातिगत भेद को नहीं मानता हूँ आपको पता है...!" मैं थोड़ा गंभीर हो उठा था-" दुखना की माँ मरी थी तब यही लोग सबसे पहले मेरे घर पहुँचे थे..। भाई ने बताया था । "

" फिर भी ...!"

" दुखना की माँ को गुज़रे कितने साल हो गए ?" तीसरे दोस्त ने दुखना की माँ से फिर जोड़ दिया था ।

" चार साल बीत चुका है, पाँचवाँ साल चल रहा है...!"

तभी भाई ने आकर पूछा-" खसिया बेचेंगे ? रमजान मियां बाहर खड़ा पूछ रहा है !"

" साढ़े आठ हजार देगा तो बोलो शाम को मिलेगा ? अभी बाहर से कुछ दोस्त लोग पधारे हैं। । "

भाई चला गया तो एक दोस्त बोला-

" आप दूसरी शादी क्यों नहीं कर लेते हैं? अभी आपकी उम्र ही क्या हुई है। चालीस में भी चौंतीस के लगते हैं-गबरू जवान हैं! खूबसूरत है ! पचीस-तीस की कोई भी लड़की आप पर फिदा हो सकती है ! कहें तो मैं खोज शुरू कर दूँ ! "

कहानी- भारत से

" बाबूजी, आप लोग नहा धोकर खाना खायेंगे या ऐसे ही, खाना बनकर रेडी है ?" पायल बेटी ने आकर पूछा ।

" मैं तो नहा-धो लिया हूँ बेटे, और चाचा लोग भी नहाये से लग रहे हैं ....!"

" हाँ हाँ हम दोनों भी फ्रेश होकर ही घर से निकले हैं -बाकी खाना खा लेंगे...!" तीसरे ने कहा

" ऐसा करो, थोड़ी देर बाद खाना लगा देना... ठीक है!"

" ठीक है बाबूजी...!" पायल चली गई तो दूसरे ने कहना शुरू किया-" मैं कह रहा था कि, दोनों बेटियाँ बड़ी हो रही हैं । कल इनकी शादी बियाह हो जाएगा तो दोनों अपने अपने घर चली जाएँगी । बड़ा बेटा अभी बाहर पढ़ रहा है ज़ाहिर है इंजीनियरिंग कर लेने के बाद वो भी घर में बैठा नहीं रहेगा । कहीं न कहीं जॉब लग ही जाएगी । उस हालत में आप तो बिल्कुल अकेले हो जाएँगे । तब यह घर भांय भांय लगने लगेगगा । भोजन पानी में भी परेशानी । आपको शादी कर लेने में कोई बुराई नहीं है ..!"

" मैं इसकी बात से सहमत हूँ । एक उम्र होती है । अभी सब कुछ आपके पक्ष में है। समय निकल जाने के बाद लोग बहुत तरह के सवाल उठाने लगते हैं ..!"

"' वैसे दुखना की माँ को हुआ क्या था...?"

" बुढ़ापा...! " मैंने मुस्कराते हुए कहा ।

" हम कुछ समझे नहीं !" दोनों एक साथ बोल उठे थे ।

मैंने कहना जारी रखा " जब मैं उसे घर लाया था तो भरपूर जवान थी – एकदम सिलसिल बाछी ! और बहुत गुस्सेल भी । पर मैं उसे बहुत चाहता था । वो भी यहाँ आकर बेहद खुश थी । देखते देखते उसने मेरे घर में खुशियों का एक संसार बसा लिया परन्तु मन की बड़ी स्वाभिमानी थी । बाहर देह पर हाथ तक रखने नहीं देती थी लेकिन घर आते ही पूर्ण समर्पित ! अपने बच्चों के प्रति उसका स्नेह और लगाव भी बेजोड़ था । हमेशा उन सबको अंकवारे लिए

चलती । पुचकारते-चाटते चूमते चलती । कभी अपनों से उन सबको अलग होने नहीं देती थी । लेकिन मुझे ज़रूरत के समय ही सटने देती-पकडने-छूने देती थी। एक बात और उसे आवारा कुत्तों से सख़्त नफ़रत थी । कभी सामने आ जाते तो वो उस पर ऐसे झपटती मानो कूट कर रख देगी , बेटा -बेटी सब तो उसे मिल गया था । पर वह परिवार नियोजन के पक्ष में कभी नहीं रही । तभी वे दिन आ गए और दुखना के जन्म के बाद वह बीमार पड़ गई । हमने ब्लॉक लेबल के बड़े डॉक्टर को बुलाया । वह आया भी । देखते ही कहा -" यह काफी कमजोर हो गई है ।" और उसने कुछ टेबलेट लिखे,द ो सूई लगाई और तीन फाइल सीरप लिख कर बोले " इसे मँगा कर घंटा-घंटा के अंतराल में तीनों फाइल सीरप पिला दीजिए....!"

" एक ही दिन में तीन फाइल सीरप....?" दूसरे ने आश्चर्य व्यक्त किया तो मैंने कहा-" मेरा भी यही सवाल था ..!" तब डॉक्टर ने कहा-" इसके शरीर में हिमोग्लोबिन की घोर कमी हो गई है । बच्चा होने के बाद और कमजोर हो गई है.! सीरप से शरीर में ब्लड की मात्रा बढ़ जाएगी और यह धीरे धीरे रिकवर करने लगेगी ।""

" फिर क्या हुआ...?" तीसरे ने आंगन की ओर देखते हुए कहा ।

" दवा मँगा कर मैंने वही किया जो डॉक्टर ने कहा । सीरप पिला दी और मैं धनबाद चला गया । भाई को बोल दिया था कि इसका ध्यान रखे । मैं रात को लौट न सका । भाई ने रात नौ बजे फोन किया" दुखना की माँ अब नहीं रही । " मैं रात को ही घर लौट आता पर उस दिन सुबह से जो बारिश शुरू हुई वो रात भर बंद नहीं हुई। दोस्तों ने भारी बारिश में घर लौटने से मना कर दिया । मैंने भाई से कहा-" अब जो होना था वो तो हो गया । सुबह सब जुगाड कर रखना। मैं समय पर पहुँच जाऊँगा...!"

इसी बीच बेटी पायल ने खाने के लिए फिर आवाज़ लगा दी ।

" अब चलो खा ही लेते हैं ...!" और तीनों खाने बैठ गये ।

खाने के बाद मैंने दुखना को फिर आवाज़ दी -" दुखना अरे वो दुखना ..." इस बार दुखना दौड़ा चला आया ।

" आपने पहले भी " दुखना " बोल के आवाज़ दी थी तब भी वह नहीं आया था !" तीसरे ने कहा-" इस बार भी नहीं आया ? उसकी जगह यह बछड़ा दौड़ा चला आया है । हम दुखना से मिलना चाहते हैं । उसको बुलाइए न ..!"

" यही तो हमारा दुखना है ! " और मैं दुखना के गले को सहलाने लगा !

" क्या...? यही वो दुखना है ? " दोनों मित्र एक साथ उछल पड़े थे !

" मतलब इस बछड़े का नाम दुखना है ?

" और जो आपने हमें कहानी सुनाई वो गाय इस दुखना की माँ थी ? "

" अभी तक आप हमें इसी बछड़े की माँ की कहानी सुना रहे थे " तीसरे का ताज्जुब भरा स्वर फूटा ।

" हम तो समझ रहे थे आप हमें अपनी पत्नी के बारे में बता रहे हैं ... गजब ! मैं अचंभित हूँ ! आपके इस साइकोलॉजी को देखकर ! फिर पायल की माँ कहाँ है....?"

" पायल बेटे, माँ को भेजो ...!' मैंने आवाज़ दी

" यह सब दुखना को दे दो ..कब से मेरा मुँह ताक रहा है ।" आने पर मैंने पत्नी से कहा ।

सभी बचा खुचा खाना एक गमले में दुखना के आगे डाल दिया गया । वह मजे से खाने लगा...!

“ जब एक जानवर के प्रति आपका इतना प्रेम है तो रति रविदास तो फिर भी आदमी है “ पहली बार एक दोस्त ने मुँह खोला था । वह अब भी दुखना को अजूबे प्राणी के रूप में देख रहा था ।

'" मुझे तो यह एक अविस्मरणीय जानवर मालूम पड़ता है " दूसरा बोला था।

" मैं तो अभी भी आश्चर्यचकित हूँ । एक जानवर जिसे अपना नाम मालूम है । और पुकार सुनकर वह दौड़ा चला आता है । प्रेम और स्नेह का अद्भुत कांबिनेशन !"

" जानवर मुँह से कुछ बोल नहीं सकता है पर प्रेम की परिभाषा वो समझता है। अपनी भाव-भंगिमाओं से वह अपनी खुशी और दुःख को व्यक्त कर देता है !"

इस बीच दुखना खाना समाप्त कर मेरे पास आया और मेरा हाथ चाटने लगा । उसके हावभाव से ऐसा लग रहा था मानो वह कहना चाहता था कि आप न होते तो आज हम नहीं होते । तीनों दोस्त जल्दी-जल्दी अपने मोबाइल से हम दोनों का फ़ोटोशूट करने लगे थे ।

****

आपके विचार और प्रतिक्रियाएँ सादर आमंत्रित हैं:

sangam.singapore@gmail.com